महर्षि दयानन्द सरस्वती की
उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा
का मुख पत्र

ओ३म्

*विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षाः,*
*सत्यव्रता रहितमानमलापहाराः।*
*संसारदुःखदलनेन सुभूषिता ये,*
*धन्या नरा विहितकर्म परोपकाराः।।*

**वर्ष : ६१ अंक : १०**
दयानन्दाब्द: १९५
विक्रम संवत्: वैशाख शुक्ल २०७६
कलि संवत्: ५१२०
सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,१२०

**सम्पादक**
डॉ. सुरेन्द्र कुमार

**प्रकाशक**-परोपकारिणी सभा,
केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

**मुद्रक**-श्री मोहनलाल तँवर
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

**परोपकारी का शुल्क**

**भारत में**

**एक वर्ष**-३०० रु.
**पाँच वर्ष**-१२०० रु.
**आजीवन** -३००० रु.
**एक प्रति** - १५/- रु.

**विदेश में**

**वार्षिक**-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस.डॉलर
**द्विवार्षिक**-९५ पाउण्ड/१५२ डॉलर
**त्रिवार्षिक**-१४० पाउण्ड/२२५ डॉलर
**आजीवन** (१५वर्ष)-५००पा./८०० डॉ.
**एक प्रति** - ३ पाउण्ड
**एक प्रति** - ४ डॉलर

**वैदिक पुस्तकालय** : ०१४५-२४६०१२०
**ऋषि उद्यान** : ०१४५-२६२१२७०

RNI. No. ३९५९ / ५९

# i jki dkjh

## मई द्वितीय २०१९

## अनुक्रम


| | | |
|---|---|---|
| ०१. ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों की रक्षा... | सम्पादकीय | ०४ |
| ०२. मृत्यु सूक्त-२९ | डॉ. धर्मवीर | ०७ |
| ०३. कुछ तड़प-कुछ झड़प | प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु' | १० |
| ०४. महर्षि दयानन्द के वेद-भाष्य.... | स्वामी सत्यप्रकाश | १२ |
| ०५. हैदराबाद मुक्ति संग्राम - एक.... | अपर्णा शुक्ल | १४ |
| ०६. निर्वाचन से चयन की ओर | अमृत मुनि | २० |
| ०७. वर्तमान परिपेक्ष में वेदप्रचार कार्य... | सुनिती छेत्री | २२ |
| ०८. शङ्का समाधान- ४८ | डॉ. वेदपाल | २६ |
| ०९. यज्ञ के आरम्भ में शुद्धिप्रकरण | सञ्जय मोहन मित्तल | २७ |
| १०. महर्षि दयानन्द का वास्तविक.... | शिवनारायण उपाध्याय | २८ |
| ११. संस्था की ओर से... | | ३० |


www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

**उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएँ**
**www.paropkarinisabha.com→gallery→videos**

*'परोपकारी' पत्रिका में प्रकाशित सभी आलेखों में व्यक्त विचार लेखकों के निजी हैं। इन्हें सम्पादकीय नीति नहीं समझा जाये। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।*

सम्पादकीय

# ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों की रक्षा के लिए मनुस्मृति की रक्षा अपिरहार्य है

आरम्भिक आर्यजन अल्पपठित होने पर भी गम्भीर स्वाध्यायशील हुआ करते थे। उनका स्वाध्याय इतना गहन था कि शङ्का-समाधान के अवसरों पर वे कई बार दिग्गज विद्वानों को भी स्तब्ध कर देते थे। आर्यसमाज की आज की पीढ़ी में स्वाध्याय के प्रति रुचि शिथिल हो गई है। उसका यह परिणाम सामने आ रहा है कि उन्हें न तो सिद्धान्तों का स्पष्ट बोध है और न आधारभूत साहित्य का परिचय एवं उसके महत्त्व का ज्ञान है। आर्यसमाज और महर्षि दयानन्द से निष्ठापूर्वक जुड़े विद्वानों, अधिकारियों और आर्यजनों को कितना हार्दिक कष्ट अनुभव होता होगा जब उन्हें यह जानकारी मिलती है कि अमुक आर्य विद्यालय, विज्ञापन या आर्यसमाज मन्दिर में स्वामी दयानन्द सरस्वती नाम का शीर्षक है, किन्तु उसके स्थान पर चित्र स्वामी विवेकानन्द का अंकित है अथवा अन्तर्राष्ट्रीय भव्य आयोजनों में स्थान-स्थान पर टंगे बैनर्स में ''आत्मा परमात्मा का एक अंश है'' इसको ऋषि दयानन्द का अनमोल वचन लिखा जाता है, अथवा कोई आर्यनेता, अधिकारी विद्वान्, कार्यकर्त्ता, संन्यासी देवालय में किसी देव मूर्त्ति की पूजा-अर्चना, दान-भोगार्पण करता है, परिजनों के अस्थि कलश को गंगा में प्रवाहित करके उन्हें मुक्त हुआ मानता है, साईं-सन्ध्या के आयोजन को आर्यसमाज का कार्यक्रम मानकर आयोजित करता है, कोई 'महिलाओं को यज्ञ कराने का अधिकार नहीं है' जैसे महर्षि दयानन्द के विरुद्ध मन्तव्यों का प्रकाशन करके उनका प्रचार-प्रसार और वितरण करता है, आदि-आदि। आश्चर्य तब होता है जब अनेक आर्य अधिकारी, नेता, विद्वान् और आर्यजन उक्त प्रकार के समर्थ आर्यों के भव्य स्वागत, सम्मान और समर्थन में उद्यत दिखाई पड़ते हैं या फिर वे उनके प्रति मौन साध लेते हैं और सारे सिद्धान्तों की गठरी बाँधकर एक ओर रख देते हैं। यदि कोई निष्ठावान् आर्य उन्हें सिद्धान्त-हानि का आभास कराता है तो उल्टे उसी पर प्रतिक्रियावादी बन जाते हैं। यदि कोई पद, पैसा, प्रतिष्ठा में अल्पसामर्थ्यवान् होता है तो 'समर्थों' के इर्द-गिर्द मँडराने वाले लोग उस पर अपने सच्चे-झूठे आरोपों, सिद्धान्तों की पूरी गठरी उंडेल देते हैं और सामाजिक हित के कार्य के संघर्ष में भी उसके साथ खड़े नहीं होते। तब आर्यसमाज के वातावरण में भी यह कहावत चरितार्थ होती दृष्टिगोचर होती है- ''समरथ को नहीं दोष गुसाईं।''

ऐसा अनुभव किया जा रहा है कि आर्यसमाज में सामाजिक अकर्मण्यता और दलबन्दी का वातावरण दृढ़ होता जा रहा है। अनेक आर्यजनों को हम देखते हैं कि वे निष्ठापूर्वक किसी आर्यसमाज मन्दिर, सिद्धान्त, साहित्य, शिक्षासंस्थान, भूमि, प्रकाशन आदि के संरक्षण के लिए समाज और न्यायालय में संघर्ष कर रहे होते हैं, किन्तु उनको आवश्यक साथ और सहयोग नहीं मिलता। उन्हें अपने भाग्य और श्रम के भरोसे पर अकेला छोड़ दिया जाता है या केवल दलबन्दी का साथ मिलता है। आर्यजन सभी अन्य सम्प्रदायों, मत-मतान्तरों, राजनीतिक पार्टियों आदि की भरपूर आलोचना करते हैं, किन्तु उनके एकजुटता के गुण को ग्रहण नहीं करते। उनके समुदाय के किसी व्यक्ति पर यदि कोई आपत्ति आती है तो सैंकड़ों-हजारों की संख्या में उनके लोग अपनों के सहयोग के लिए खड़े हो जाते हैं। संगठन पर यदि कोई आँच आती है तो तन-मन-धन से संगठित और सक्रिय हो जाते हैं। आर्यसमाज में सांगठनिक भाव क्षीण हो गया है। अतः शासन और समाज में उसका पहले जैसा प्रभाव भी नहीं रह गया है।

आर्यसमाज की पहले ऐसी अकर्मण्य स्थिति नहीं थी। इसने अनेक संघर्षपूर्ण आन्दोलन करके सफलता अर्जित की है। स्वतन्त्रता आन्दोलन, हरियाणा का हिन्दी सत्याग्रह, गोरक्षा आन्दोलन आदि में आर्यसमाज ने सफल नेतृत्व किया है। स्वतन्त्रता से पूर्व हैदराबाद एक कट्टर

इस्लामिक राज्य था। जिसका निजाम (शासक) मीर अस्मान अली खाँ था, जो स्वयं कट्टर मुसलमान था। उसने अपने राज्य में आर्यसमाज के सभी धार्मिक अधिकारों और गतिविधियों पर प्रतिबन्ध लगा दिया था। आर्यों पर अत्याचार किये जा रहे थे। सन् १९३९ में आर्यसमाज ने सार्वदेशिक सभा के नेतृत्व में निजाम सरकार के विरुद्ध आन्दोलन किया, जिसमें सम्पूर्ण भारत के आर्यों ने भाग लिया। अन्ततः निजाम को झुकना पड़ा और सभी प्रतिबन्ध समाप्त करने पड़े। यह आर्यों की अपने मौलिक अधिकारों के प्रति निष्ठा, जागरूकता और सांगठनिक एकता का सुफल था। सन् १९४४ में आर्यसमाज के लिए फिर एक कठोर परीक्षा की घड़ी आई। तत्कालीन सिन्ध सरकार ने चौदहवें समुल्लास सहित सत्यार्थप्रकाश के प्रकाशन पर प्रतिबन्ध लगा दिया और १९४६ में उसको जब्त करने के आदेश भी जारी कर दिये। सार्वदेशिक सभा के नेतृत्व में आर्यनेताओं और कार्यकर्त्ताओं ने उसके विरुद्ध आन्दोलन आरम्भ कर दिया। सैंकड़ों आर्यजन गले में 'सत्यार्थप्रकाश' टांगकर कराची के बाजार में गिरफ्तारी देने के लिए घूमने लगे। आर्यों की संघर्षशीलता और अपने धर्मग्रन्थ के प्रति निष्ठा तथा एकता देखकर सिन्ध सरकार घबरा गई और उसने अपनी आज्ञा वापिस ले ली।

सत्यार्थप्रकाश की विषयवस्तु मत-मतान्तरों के असत्य के खण्डन और सत्य के मण्डनपरक तथा समीक्षात्मक-आलोचनात्मक होने के कारण उस पर प्रारम्भ से ही प्रहार होते रहे हैं, हो रहे हैं और होते रहेंगे, यह उसकी नियति है और उसकी रक्षा करने के लिए संघर्ष करते रहना यह आर्यसमाज की नियति है। परतन्त्र भारत में भी आर्यसमाज का इतना प्रभाव था कि विधर्मियों के साथ-साथ भारत के तत्कालीन राजनेता महात्मा गाँधी, खान अब्दुल गफ्फार खाँ, जवाहरलाल नेहरू, अब्दुल कलाम आजाद, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद जैसे नेता इसका लोहा मानते थे और आन्दोलनों तथा इसके अधिकारों हेतु इसका पक्ष लेते थे। आज भारत स्वतन्त्र है, भारत का अपना संविधान है, उसमें स्वतन्त्रता की अभिव्यक्ति का प्रावधान है, किन्तु आर्यसमाज की स्थिति उलट हो गई है। आज इसको हैदराबाद का निजाम या सिन्ध सरकार प्रतिबन्ध का आदेश नहीं देती अपितु अपनी सभाओं के ही अधिकारी इसके प्रकाशकों को आदेश देते हैं कि हमारे सम्मेलन में खण्डन-मण्डन-परक साहित्य विक्रयार्थ न लायें। उत्सवों के आयोजक कहते हैं कि मंच से खंडन-मंडन विषयक न बोलें। पत्रिकाओं के प्रकाशक कहते हैं खण्डन-मण्डनात्मक लेख न भेजें। अपने बनाये ये रास्ते क्या 'सत्यार्थप्रकाश' तक अन्ततः नहीं जायेंगे? यह बिन्दु विचारणीय है।

स्थिति इतनी निरीह होती जा रही है कि सन् २००८ में दो मुस्लिमजनों (खलील खान और उस्मान गनी) ने दिल्ली के तीस हजारी कोर्ट/हाईकोर्ट में सत्यार्थप्रकाश पर प्रतिबन्ध लगाने के लिए मुकदमा डाला। आर्यसमाज में कोई खास सुगबुगाहट नहीं, सभाओं में कोई सक्रियता नहीं, आर्य विद्वानों में कोई कर्मण्यता नहीं, आन्दोलन या एकजुटता की बात तो छोड़िए। वहाँ श्री विमल वधावन एडवोकेट, श्री महेन्द्रपाल आर्य, प्रो. राजेन्द्र 'जिज्ञासु', डॉ. धर्मवीर जैसे कुछ ही आर्यजन खड़े दिखाई दिये। इसे आर्यजनों का श्रम और सौभाग्य ही कहिये कि इस बार भी 'सत्यार्थप्रकाश' विजयी रहा।

महर्षि दयानन्द के ग्रन्थों के मूल आधार ग्रन्थों वेदों, वैदिक शास्त्रों, विशेषतः मनुस्मृति आदि पर प्रतिदिन मत-मतान्तरों के अन्दर-बाहर से प्रहार हो रहे हैं। विशेषतः वामपन्थी, अंग्रेजीदां और दलित समुदाय के लोग इनका कट्टर विरोध करते हैं। दलितों में इन लोगों ने अनेक भ्रान्तियाँ उत्पन्न कर दी हैं। उन भ्रान्तियों का निराकरण करके इस साहित्य की रक्षा करने का दायित्व मुख्यतः आर्यसमाज का है, क्योंकि आर्य-विचारधारा और इसका साहित्य वैदिक साहित्य पर टिका हुआ है। इसके रक्षण में आर्यसमाज का जीवन है और इसके विनाश में

आर्यसमाज का पतन है। किन्तु आर्यसमाज इस दिशा में अकर्मण्य है, निष्क्रिय है, असावधान है, प्रमाद में है। इस कर्मण्यता से उत्पन्न होने वाले दुष्परिणामों के प्रति सभाओं में सोच का और सक्रियता का अभाव है। आर्यसभाओं और आर्यसमाजों ने इस गम्भीर विषय को कभी गम्भीरता से नहीं लिया। सन् १९८९ की घटना है। न्याय क्षेत्र के एक संगठन ने यह विचारकर कि मनुस्मृति विश्व का प्राचीनतम संविधान है और उसके रचयिता महर्षि मनु उस संविधान के आदि-निर्माता हैं, आदि-पुरुष हैं, आदि-राजा हैं; उच्च न्यायालय जयपुर के परिसर में मनु का स्टैच्यु (प्रस्तर चित्र) स्थापित कराया। भ्रान्तियों के कारण दलित-समुदाय ने उसका इतना विरोध किया कि उच्च न्यायालय की प्रशासन-पीठ ने मनु के स्टैच्यू को वहाँ से हटाकर कहीं अन्यत्र स्थापित करने का स्थानीय प्रशासन को आदेश दे दिया। यह महर्षि मनु का सरासर अपमान था। मनु के सम्मान की रक्षा का दायित्व आर्यसभाओं और आर्यसमाजों को लेना चाहिए था, किन्तु सब उदासीन बने रहे। किसी ने सांगठनिक कर्त्तव्य का निर्वाह नहीं किया। विश्व हिन्दू परिषद् के नेता आचार्य धर्मेन्द्र जी महाराज (जयपुर) धन्यवाद के पात्र हैं कि उन्होंने उक्त अपमानजनक निर्णय के विरुद्ध न्यायालय से तात्कालिक स्थगन आदेश प्राप्त किया। उसके पश्चात् स्थगन आदेश को स्थायी करने हेतु श्री धर्मपाल आर्य (दिल्ली), डॉ. धर्मवीर (अजमेर) और इन पंक्तियों के लेखक ने संघर्ष किया। श्री धर्मपाल आर्य ने हाईकोर्ट में स्वयं बहस की और वह स्थगन आदेश स्थायी हो गया। आज भी मनु का स्टैच्यू (प्रस्तर चित्र) वहाँ विराजमान है। न्यायालय में बहस चार दिन चली, समाचार-पत्रों में रोज समाचार छपते थे। वहाँ साथ देने के लिए आर्यसमाज की एक भी सभा का आर्य अधिकारी, नेता, संन्यासी, विद्वान्, आर्यसमाजी नहीं आया। शायद, उन्होंने यह मान लिया कि यह विषय हम तीनों का ही निजी हित का विषय है।

**महर्षि दयानन्द के ग्रन्थों की रक्षा करने के लिए आर्यसमाज को मनुस्मृति की रक्षा करनी ही पड़ेगी। महर्षि के क्रान्तिकारी सामाजिक सुधारों को शास्त्रीय आधार देने के लिए मनुस्मृति का संरक्षण आर्यसमाज को करना ही होगा, क्योंकि ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों का, वेदों के बाद दूसरा प्रमुख आधारस्तम्भ मनुस्मृति ही है।** महर्षि के अधिकांश सिद्धान्त, विधान, विवरण, समाधान मनुस्मृति पर आधारित हैं। उन्होंने अपने ग्रन्थों में अपनी मान्यता की पुष्टि के लिए मनुस्मृति के पाँच-सौ चौदह (५१४) श्लोकों को प्रमाण रूप में स्वीकृत किया है। धर्मशास्त्रों में, अध्ययन हेतु प्रक्षेपरहित मनुस्मृति को ही मान्य किया है और उसे अवश्य पठनीय माना है। महर्षि के ग्रन्थों का सम्मान मनु और मनुस्मृति का सम्मान है तथा मनु और मनुस्मृति का सम्मान महर्षि के ग्रन्थों का सम्मान है। जब मनुस्मृतिरूप आधार की हानि होगी तो ऋषि-ग्रन्थों के आधार की भी हानि होगी। इसीलिए जब आलोचक मनुस्मृति की आलोचना करते हैं तो महर्षि के ग्रन्थों की भी आलोचना करने लगते हैं। महर्षि के ग्रन्थों को आलोचना से बचाना है तो मनुस्मृति को भी आलोचना से बचाने का दायित्व लेना होगा। महर्षि दयानन्द द्वारा घोषित और आर्यसमाज द्वारा मान्य प्रक्षेप-रहित मनुस्मृति किसी वर्ग के अहित में नहीं है। ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों के लिए मनुस्मृति की अपरिहार्यता और महत्ता को आर्यों को गम्भीरता से समझना होगा और उसके लिए एकजुट होकर प्रयत्नशील होना होगा, अन्यथा चारों ओर से होने वाले आलोचनात्मक प्रहारों से स्वयं को बचाना आर्यसमाज के लिए कठिनतर होता जायेगा। आर्यसमाज की संरचना-पद्धति ही ऐसी है कि इस पर प्रहार होते ही रहेंगे। आर्यों को स्मरण रखना चाहिए कि प्रहारों से डरने की प्रवृत्ति से, विवादों से बचने की मानसिकता से, संघर्षों से भागने की नीति से आर्यसमाज जीवित तो रह सकता है, जीवन्त नहीं रह सकता।

**डॉ. सुरेन्द्र कुमार**

# मृत्यु सूक्त-२९

**प्रवचनकर्त्ता- डॉ. धर्मवीर**

**लेखिका - सुयशा आर्य**

**परोपकारिणी सभा के पूर्वप्रधान डॉ. धर्मवीर जी के वेद-विज्ञान के अन्तर्गत प्रसारित व्याख्यानों की जनोपयोगिता को ध्यान में रखकर 'परोपकारी' में प्रकाशित किया जा रहा है। व्याख्यानों के लेखन का कार्य उनकी ज्येष्ठ पुत्री सुयशा आर्य कर रही हैं। सम्पादक**

**इमं जीवेभ्यः परिधिं दधामि मैषां नु गादपरो अर्थमेतम्।**
**शतं जीवन्तु शरदः पुरुचीऽन्तर्मृत्युं दधतां पर्वतेन।।**

हम वेद-ज्ञान की चर्चा कर रहे हैं और इस चर्चा के प्रसंग में ऋग्वेद के दशम मंडल के १८ वें सूक्त पर बात कर रहे हैं, इस सूक्त का देवता मृत्यु है, इसका ऋषि यामायनः और हमारी आज की चर्चा का मन्त्र चौथा है। इस मन्त्र में मृत्यु का जो क्रम है, वो क्या है उसकी चर्चा है, क्योंकि जो-जो संसार में आया है, उस-उसको जाना है और वो जाता है, लेकिन हमको कब दुःख होता है, कब लगता है कि अभी समय नहीं था जाने का। वो जो सन्दर्भ है उसकी चर्चा यहाँ मिलती है।

**इमं जीवेभ्यः परिधिं दधामि मैषां नु गादपरो अर्थमेतम्।**

मन्त्र का जो पहला चरण है, पहला भाग है, पहली पंक्ति है इसमें दो बातें कही हैं-एक तो यह कही गयी है-

**इमं जीवेभ्यः परिधिं दधामि।**

मनुष्यों के लिए एक सीमा बताई है उस सीमा का हम उल्लघंन न करें तो हमारी यात्रा सुखद हो सकती है।

हमारे यहाँ जो संस्कार हैं, उनमें मृत्यु के बाद का जो संस्कार है, अन्त्येष्टि है, उसमें एक मन्त्र पढ़ते हैं,

**यथा न पूर्वमपरो जहात्येवा धातरायूंषि कल्पयैषाम्।**

परमेश्वर से, विधाता से यह बात कही गयी है, **एवा आयूंषि कल्पय।** तू इनकी आयुओं को इस तरह से बना, **यथा न पूर्वम् अपरोजहाति**- एक क्रम है, जिसे हम यथाक्रम कहते हैं। **यथा** शब्द का प्रयोग अनुक्रम के लिए आया है। **यथावृद्धं ब्राह्मणान् आमन्त्रयस्व**। जिस क्रम की आयु के लोग हैं, उसी क्रम से बुलाओ। तो मृत्यु कैसे होनी चाहिए? कहा यथाक्रम और वो क्रम है कि जो व्यक्ति संसार में जिस क्रम से आया है उसी क्रम से जाये, अर्थात् जिसका जन्म पहले हुआ है, उसकी मृत्यु भी पहले हो और जिसका जन्म बाद में हुआ है उसकी मृत्यु भी बाद में हो।

कहा गया है कि रामराज्य में कभी ऐसा नहीं हुआ कि पिता के कन्धे पर बेटे की अर्थी जाये। नियम यह है कि बेटे के कन्धे पर पिता की अर्थी जाये। जो पहले आया है वो पहले जाये और इस क्रम के बिगड़ने को, इस व्यतिक्रम को अनुचित माना गया है, पाप माना गया है, अपराध माना गया है, दुर्भाग्य माना गया है। यद्यपि आप यह नहीं कह सकते कि कौन कब मरेगा, किसकी मृत्यु कब होगी। कभी भी हो सकती है! लेकिन होनी कब चाहिये, इस क्रम को ही यह मन्त्र बता रहा है। कोई व्यक्ति पहले ही मर जाते हैं, बचपन में ही मर जाते हैं, जवानी में ही मर जाते हैं, यह व्यतिक्रम है, यह परम्परा के विपरीत है। ऐसा होना अकाल मृत्यु कहलाएगी, जिस क्रम से हम आये हैं, उस क्रम से जायेंगे तो वह अवधि बनेगी, अन्यथा नहीं बनेगी और जब ऐसा होता है तो मनुष्य को सबसे अधिक दुःख होता है।

मनुष्य के जीवन की एक विशेषता है, वो अपने को कभी मरा हुआ नहीं देखना चाहता। मृत्यु से डर क्यों लगता है, तो व्यास जी कहते हैं- **अहं मा भुवं न भूयासम्**- कहीं ऐसा न हो कि मैं रहूँ नहीं। आदमी मृत्यु से इसलिए डरता है कि कहीं मेरा अस्तित्व न मिट जाए। लेकिन यदि उसे लगता है कि मेरा अस्तित्व तो है। कैसे? उसका अस्तित्व उसकी सन्तान से होता है।

**आत्मा वै पुत्र नामासि स जीव शरदः शतम्,**

**हृदयादधिजायसे।**

वो सन्तान को अपना ही प्रतिरूप मानता है। अपने रूप में देखता है, इसलिए जो कुछ उसके पास है, वह सब अपनी सन्तान को देना चाहता है। अपनी सन्तान के रहते किसी और को नहीं दे सकता है। वो पुत्र को अपनी आत्मा समझता है। **आत्मा वै पुत्र नामासि**। पुत्र के रूप में मेरा ही जन्म है, इसलिए उसके जीवन की कामना करता है।

मनुष्य के जीवन में यदि सन्तान न हो, तो मनुष्य के जीवन का उत्साह समाप्त हो जाता है। वो सोचता है कि मुझे किसके लिए करना है। उसके अन्दर संपत्ति इकट्ठा करने की, जोड़ने की, धन कमाने की इच्छा समाप्त हो जाती है। उसका जीवन प्राय: निराशा से युक्त होता है। जो व्यक्ति सामाजिक कामों में, परोपकार के कामों में व्यस्त नहीं है उसके लिए नि:सन्तान होकर जीना बहुत कठिन होता है। व्यक्ति राजा है या रंक है, नि:सन्तान होने का कष्ट सबको बराबर है। राजा दशरथ को यही कष्ट था, राजा दिलीप को यही कष्ट था, आज एक सामान्य व्यक्ति को भी यही कष्ट है। हम सन्तान को सन्तान कहते ही इसलिए हैं कि वह '**तनु विस्तारे**'- धातु से बनता है वह हमारा विस्तार है। वह हमको आगे तक ले जा रहा है, इसलिए वह हमारी सन्तान है।

सन्तान के महत्त्व की चर्चा करते हुए एक शब्द का प्रयोग हमारे यहाँ होता है-उसे **पुत्र** कहते हैं। मध्यकाल के पंडे, पुजारियों ने इस शब्द का अनर्थ ही कर डाला है। संस्कृत में जैसे हर शब्द अपना एक विशेष अर्थ रखता है और शब्द के अन्दर ही उस अर्थ की प्रतीति होती है। 'पुत्र' में 'त्र' बचाने का, त्राण का वाचक है। संस्कृत में 'पुम्'- नरक का नाम है, दु:ख का नाम है और 'त्र' बचाने का नाम है। पुत्र को पुत्र क्यों कहते हैं, तो इसका उत्तर है- **पुम् नाम नरकात् त्रायति।** पुम् नामक नरक से बचाने वाला होने से पुत्र होता है। इस शब्द को लेकर हमारा रुढ़िवादी जगत् पुत्र की बड़ी महत्ता गाता है।

एक बार एक संगोष्ठी में एक संस्कृत के विद्वान् ने पुत्र की महत्ता बताते हुए कहा कि हिन्दू धर्म में पुत्र का बड़ा महत्त्व है जिसके पास पुत्र नहीं है वह नरक में अवश्य जाएगा क्योंकि उसको बचाने वाला वही होता है। इसी शब्द के कारण हमारे परिवार में एक असन्तुलन पैदा हुआ कि हमने कन्या को तुच्छ समझा और लड़के को महत्त्वपूर्ण समझा। जबकि दोनों में कुछ भी अन्तर नहीं है। जब वो बहुत सारी चर्चा कर चुके तो मैंनें उनसे एक प्रश्न किया- ठीक है आप कहते हैं पुत्र शब्द का अर्थ है कि जो अपने माता-पिता को दु:खों से बचाता है। स्वाभाविक है कि वह बचाता है। वह वृद्धावस्था में भी बचाता है, रोग, बीमारी में भी बचाता है। उनके लिए सुख-सुविधा देकर उनके जीवन को सरल भी बनाता है, इसलिए उसका महत्त्व तो है, लेकिन काल्पनिक नरक की बात यहाँ नहीं की जा रही है।

आचार्य यास्क से जब पूछा गया कि नरक क्या होता है तो कहते हैं-

**नरकं न्यर्कम्, नीचै: गमनम्, नास्मिन् रमणम्,**
**स्थानम् अल्पम् अस्ति इति वा।**

बोले, जब भीड़ बहुत हो, लोग ज्यादा हों, स्थान कम हो तो कहते हैं नरक में आ गये। जब बहुत असुविधायें होती हैं तो नरक में आ गये, बहुत मलिनता गन्दगी होती है तो कहते हैं कि नरक में आ गये और इसके विपरीत की परिस्थिति को हम स्वर्ग कहते हैं। इसलिए नरक निम्न गति है, नीचे की ओर जाना है, पतन है और किसी चीज़ का थोड़ा होना, असुविधा का बढ़ना है, वह तो जीते-जी ही होता है। किसी मनुष्य के पास भोजन नहीं है, किसी के पास दवा नहीं है, किसी के पास सेवा नहीं है।

आदमी वृद्धावस्था में आशा करता है, अपेक्षा करता है कि उसकी कोई सेवा करेगा, शुश्रुषा करेगा, उसे कोई समय पर औषध देगा, उसको कोई समय पर सहायता देगा। जब वह नहीं होती तो फिर नरक ही तो है। जब मनुष्य को असहाय होकर जीना पड़ता है तो उसे नरक ही अनुभव होता है। इसलिए पुत्र शब्द का यह अर्थ तो ठीक है कि वह नरक से बचाता है लेकिन इसका यह अभिप्राय बिल्कुल नहीं है कि केवल लड़का ही नरक से बचाता है, क्योंकि 'पुत्र' शब्द का स्त्रीलिंग 'पुत्री' बनता है। और जो अर्थ पुल्लिंग शब्द का है, वही अर्थ स्त्रीलिंग शब्द का भी है। यदि पुम् नाम नरक से बचाने के कारण इसकी संज्ञा पुत्र है, तो पुम् नाम नरक से बचाने के कारण उसकी भी

संज्ञा पुत्री है। विशेष क्या है? अकारण ही शब्द पर जो विवाद है, बोझ है वह न जानने के परिणामस्वरूप है। दोनों की संगति को साथ-साथ हम नहीं समझ रहे हैं।

इसलिए जिसके पास संतति है, वह यह समझता है 'मैं हूँ', मेरा अस्तित्व है, मुझे कोई जानेगा, समझेगा, पुकारेगा, बोलेगा, मेरी चर्चा करेगा, तो उसे ऐसा लगता है कि इसलिए मुझे अपने लिए ही करना है। वो पुत्र के लिए करता हुआ अपने लिए ही करता हुआ अनुभव करता है। इस मन्त्र में यही बात कही गयी है कि मनुष्य को संसार में आने का जीवन का जो क्रम मिला है इसमें व्यतिक्रम नहीं होना चाहिये और यदि यह व्यतिक्रम नहीं होता है तो मनुष्य को संसार से जाने में कोई कष्ट नहीं होता, कोई दु:ख नहीं होता, कोई अधूरापन नहीं लगता। जाते हुए हमारी संतति के द्वारा, सेवा के द्वारा, साधनों के द्वारा जो सुख दिया जाता है, प्राप्त कराया जाता है, उससे हमको सन्तोष का अनुभव होता है। इसलिए मन्त्र में कहा-

**इमे जीवेभ्य: परिधिं दधामि**
**मैषां नु गादपरो अर्थमेतम्।**

## ( घनाक्षरी )

## धरती पै देवता दया के दयानन्द है

**सोमेश 'पाठक'**

चन्द्र की चमक चकमाती है चकोर को ही,
फक्कड़ फकीरों को फँसाते नहीं फन्द हैं।
कंटक कठोर कण्ठ कविता कहत कब?
छुद्र छली छातियों से छूटते न छन्द हैं।
प्रात: का प्रताप जा प्रतीचि में प्रतीत हो।
तो पंकज के पाद ने प्रताड़े प्रतिबन्ध हैं।
शूरता सिखायें भला सिंहों को सियार कब,
भीरुता के बन्धन में वीरता न बन्द हैं।।१।।
सुख का तो संग कहाँ? साधु और संतन को,
भूतल पे योगियों के भोग मूल कन्द हैं।
शीतल समीर सर-सर ज्यों सरसती है,
आंधियों के आगे नहीं तैसे आनन्द हैं।
निखिल, निडर, निर्मल, निर्मोही, नेक,
नीति के निपुण, निर्लेप, निर्द्वन्द्व हैं।
जान लेवे जान के तो जान को ही दान देत
धरती पै देवता दया के **दयानन्द** हैं।।२।।

## लेखकों से निवेदन

- लेखक कृपया अपने मौलिक व अप्रकाशित लेख ही भेजें।
- लेखक अपना पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या लेख के साथ अवश्य लिखें।
- परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।
- अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।
- रचना के प्रकाशन में छ: माह या अधिक समय भी लग सकता है, अत: कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें।
- स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। -**संपादक**

## गुरुकुल के लिये प्रवेश-सूचना

परोपकारिणी सभा, अजमेर द्वारा संचालित महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान-अजमेर में वैदिक धर्म एवं आर्यसमाज के उपदेशक तैयार करने हेतु उपदेशक कक्षा में प्रवेश प्रारम्भ हैं।

प्रवेशार्थी की न्यूनतम आयु १४ वर्ष तथा कक्षा आठ या उससे अधिक उत्तीर्ण हो। आर्ष-पद्धति से व्याकरण, दर्शन तथा महर्षि निर्दिष्ट पाठ्यक्रम के अध्यापन की व्यवस्था है।

गुरुकुल में अध्यापन, भोजन एवं आवास की नि:शुल्क व्यवस्था है।

**प्रवेश के इच्छुक अभ्यर्थी सम्पर्क करें-**

**आचार्य, आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान, पुष्कर रोड, अजमेर।**

**दूरभाष- ९८७९५८७७५६**

# कुछ तड़प-कुछ झड़प

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

**कनाडा से डॉ. राजेन्द्र जी से धर्म-चर्चा**- कनाडा से हमारे अभिन्न बन्धु डॉ. राजेन्द्र जी ने कोई चार दिन पूर्व बहुत महत्त्वपूर्ण धर्म-चर्चा चलभाष पर की। आप भारत आये, परन्तु अबोहर न पहुँच सके। उन्हें अजमेर की यात्रा के लिये प्रेरित किया, परन्तु आप रुग्ण होने से शीघ्र कनाडा लौट गये। आपका श्रीमान् पं. सुखदेव जी शास्त्री करतारपुर से तथा इन पंक्तियों के लेखक से जो स्नेह है उसे शब्दों में नहीं बताया जा सकता। इस धर्मानुरागी कर्मठ आर्यपुरुष ने श्री अजय जी आर्य को पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय कृत Philosophy of Dayananda का नया संस्करण निकालने का सुझाव दिया और प्रसाद में सहयोग करने का आश्वासन दिया।

**सोच समझ के लिखिये**- आर्यसमाज में कुछ सज्जनों को अब लिखने की तो बहुत रुचि है, परन्तु देखा यह गया है कि हर कोई हर विषय पर विशेष रूप से इतिहास विषय पर कुछ भी लिखने के लिये तैयार है, परन्तु हमारे अधिकांश लेख लिखने वाले बन्धुओं का किसी भी एक विषय पर अधिकार नहीं है। यह चिन्ता का विषय है। पहले आर्यसमाज में प्रत्येक विषय के कई-कई मर्मज्ञ विद्वान् थे। अब दूसरों के लिखे ग्रन्थ व जीवनियाँ सामने रखकर एक दृष्टि डालकर एक लेख बनाकर कई पत्रों में छपने दे दिया जाता है।

तड़प-झड़प के स्वाध्याय प्रेमी बिना विचारे लिखे गये ऐसे लेखों पर हमें प्रश्न पूछते रहते हैं। क्या किया जावे? जिसने लेख लिखा उससे पूछना चाहिये। हमने विद्यार्थी जीवन में पं. शान्तिप्रकाश जी, महाशय चिरञ्जीलाल जी 'प्रेम' और श्री पण्डित त्रिलोकचन्द्र जी शास्त्री के चरणों में बैठकर शास्त्रार्थ साहित्य, शास्त्रार्थों तथा आर्यसमाज के इतिहास को अपना विषय बनाकर कुछ अधिकार प्राप्त किया। 'प्रेम' जी की सीख हमारे हृदय पर कोई ६५-६७ वर्ष से अङ्कित है, A teacher, preacher and an editor should know something of everything and everything of something. एक लेख पर प्रश्न मिला क्या महात्मा मुंशीराम जी ने पन्द्रह वर्ष की समाज-सेवा के पश्चात् संन्यास ले लिया? जैसा लेखक वैसा ही पत्रिका का सम्पादक। दोनों को इतना भी नहीं पता कि अठारह वर्ष तक 'सद्धर्मप्रचारक' जालन्धर से निकालने के दस वर्ष पश्चात् महात्मा जी ने संन्यास लिया। पाँच वर्ष की सक्रिय समाज सेवा के पश्चात् 'सद्धर्म प्रचारक' निकाला गया। इस प्रकार तो ३३ वर्ष हो गये। कहाँ १५ वर्ष और कहाँ ३३ वर्ष? यह है लेखन की प्रामाणिकता!

**कुल्लियाते आर्यमुसाफिर की धूम मचाओ**- जब तक यह लेख पाठकों तक पहुँचेगा तब तक कुल्लियाते आर्य मुसाफ़िर का दूसरा भाग छपकर अजमेर पहुँच चुका होगा। गुरुकुल आबू के आचार्य श्री ओमप्रकाश जी के पिता जी एक स्वाध्यायप्रेमी आर्यपुरुष हैं। आपने परोपकारी तथा कुल्लियात की सम्पादकीय टिप्पणियों में पं. लेखराम जी के एक मौलिक तर्क पर बहुत गद्गद होकर चर्चा की। हमने उन्हें बताया कि हमारे बार-बार लिखने पर भी आर्यसमाज में वक्ता प्रवक्ता हमारे आचार्यों ने अवैदिक मत-पन्थों व विरोधी विधर्मी लोगों के साहित्य में पं. लेखराम के प्रभाव व छाप के जो अनूठे प्रमाण हमने दिये हैं उनको कभी मुखरित ही नहीं किया। ये लोग 'वैदिक इस्लाम' हमारी कृति पढ़ लेते तो उसमें दिये डॉ. गुलाम जेलानी के वाक्यों को मुखरित करके पं. लेखराम जी और आर्यसमाज की धूम मचा देते।

महर्षि की स्वलिखित जीवनी में एक भी घटना को निराधार सिद्ध किये बिना मैक्समूलर ने उसे Fiction (काल्पनिक) लिखने का दुस्साहस किया है। हमने 'मैक्समूलर का एक्सरे' पुस्तक में झूठ की पोल खोलते हुये पं. लेखराम जी की कुल्लियात आदि से प्रमाणों की झड़ी लगाकर मैक्समूलर को, ईसाइयों को और बाइबिल की गप्पों, परस्पर विरोधी कथनों से ऐसा धरा है कि हमारी पुस्तक पढ़कर प्रबुद्ध पाठक Lies with Long Legs (लम्बी-लम्बी टांगों वाले झूठ) पुस्तक को याद करेंगे। जिन झूठों की मिथ्या कथनों की टाँगें लम्बी हैं उनके पाँव

भी तो लम्बे ही होंगे। हमने पं. लेखराम जी से पं. शान्तिप्रकाश जी पर्यन्त अपने पूर्वजों के आशीर्वाद से लम्बे-लम्बे झूठों के पाँव उखाड़ कर दिखा दिया है। कुल्लियात ने मत-पन्थों को झकझोर दिया। न जाने लम्बे समय तक आर्यसमाज क्यों सोया रहा। इसे नहीं छपवाया। यशवन्त जी, लक्ष्मण जी के उत्साह को देखकर श्री धर्मवीर जी ने इसके पुनः प्रकाशन का मन बना लिया। अब इसे पढ़ने-पढ़ाने और खपाने का यज्ञ रचाना होगा। सत्तर वर्ष के पश्चात् इसी कोटि का नया ग्रन्थ 'मैक्समूलर का एक्सरे' अब प्रेस में जाने को तैयार है।

**जिनकी स्मरण शक्ति असाधारण थी**- आर्यसमाज के इतिहास में हमारे जिन पूर्वजों की स्मरणशक्ति असाधारण थी, उनकी कुछ चर्चा सुनकर कई प्रेमियों ने परोपकारी में कुछ रोचक प्रसंग देने को कहा है। इस सेवक को अपनी आयु के छठे वर्ष से लेकर अब तक की छोटी-छोटी बातें व घटनायें ठीक-ठीक याद हैं। इस प्रकार ८२ वर्ष में जिन पूर्वजों की असाधारण स्मरणशक्ति देखी उन सब पर क्रमशः बारी-बारी लिखने का प्रयास किया जावेगा।

**भूमण्डल प्रचारक मेहता जैमिनि जी**- सन् १९४६ में उनको पहली बार स्यालकोट में सुना तो उनकी अद्भुत स्मरणशक्ति की लेखक पर ऐसी छाप पड़ी जिसे सब जानकार जानते हैं। वे व्यक्तियों के नाम, पुस्तकों के नाम, नगरों के नाम तथा सन्-संवत् व्याख्यान में ऐसे बताते जाते थे मानों कि टी.वी. से देख-देखकर बोल रहे हों। किसी घटना के, सन्-संवत के अशुद्ध होने का प्रश्न ही नहीं था। सन् १९५४ में नाभा के आर्यसमाज में इस विनीत से ऋषि दयानन्द पं. लेखराम जी के काल के कादियाँ के एक आर्यपुरुष लाला मलावामल का कुशल क्षेम पूछा तो उन्हें बताया कि कोई दो वर्ष हुये होंगे वह चल बसे।

कोई डेढ़ वर्ष पश्चात् वे कादियाँ आये तो वहाँ फिर पूछा, ''लाला मलावामल कैसे हैं?'' उन्हें कहा, कोई दो वर्ष हुये वह तो चल बसे। तब उन्हें नाभा में कही बात याद आ गई, बोले, वहाँ भी आपने कहा था कोई दो वर्ष पूर्व वह दिवंगत हो गये। लगता है आप भूल गये उनका निधन तीन-चार वर्ष पूर्व हुआ। पास खड़े सब सज्जन उनकी स्मरणशक्ति को देखकर दंग रह गये। वह ठीक कह रहे थे। वह व्याख्यान देते-देते अपनी आयु के वर्ष, महीने, सप्ताह व दिन तक बता दिया करते थे। उनका दिया प्रमाण (Reference) सदा ठीक ही हुआ करता था।

**पं. शान्तिप्रकाश जी**- उनके हमने अनेक व्याख्यान सुने, लेख पढ़े, शङ्का-समाधान कई बार किया। उनको इतना कुछ कण्ठाग्र था कि पुस्तकों के प्रमाण, पत्र-पत्रिकाओं के प्रमाण, कई बार पृष्ठ आदि सब ठीक-ठीक उद्धृत करते जाते थे। उनके दिये प्रमाण को कभी विरोधी शास्त्रार्थ में कहीं झुठला नहीं सका।

**कभी ध्यान तो दीजिये**- आर्यसमाज में लाला लाजपतराय जी ने पं. गुरुदत्त जी की डायरियों का उनकी जीवनी के लेखन में कुछ लाभ उठाया। उनका जीवनकाल ही तो स्वल्प था। इतनी डायरियाँ भी क्या होतीं। पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज पर अपने ग्रन्थ लौहपुरुष में लेखक ने उनकी डायरियों (जितनी भी तब उपलब्ध थीं) का पर्याप्त सदुपयोग करके इतिहास व आर्यसमाज से बहुत न्याय किया है। इतिहास पर प्रकाश डालने वाली आश्चर्यजनक जानकारी हमने डायरियों से निकाल कर दी है। यह अपने आप में आर्यसमाज वह हिन्दी जीवनी साहित्य में एक कीर्तिमान है। क्या कोई माई का लाल इस ग्रन्थ के नये संस्करण के आने पर पूज्य स्वामी जी के जीवन के इस पहलु पर कुछ लिखेगा?

**श्री रामभज जी मदान**- देहली के वयोवृद्ध आर्यपुरुष चुपचाप समाज सेवा करने वाले आर्यपुरुषों में से है। आप पं. गुरुदत्त जी विद्यार्थी को जन्म देने वाली मुलतान की धरती की देन हैं। आपने आर्यसमाज की सेवा करते हुये कई अविस्मरणीय कार्य किये हैं जिनकी कोई चर्चा करके आगे किसी को प्रेरणा नहीं करता।

आर्य जाति, आर्य धर्म, हमारे पूर्वजों, महर्षि दयानन्द पर एक घटिया पुस्तक छपी। किसी ने उत्तर तक न दिया। हिन्दू क्या बोलेगा? आर्यसमाज भी चुप रहा। हमने लेखनी उठा ली। आपको पता लगा। पं. गुरुदत्त का यह लाडला मैदान में उतर आया है। आपके सहयोग से पुस्तक छपेगी। थोड़ी प्रतीक्षा कीजिये। धर्मप्रेमी जानेंगे मानेंगे कि पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय के मानस पुत्र ने आर्य धर्म की रक्षा करते हुये विरोधियों के छक्के छुड़ाये हैं। तर्क, युक्ति, प्रमाणों से परिपूर्ण पुस्तक की प्रतीक्षा कीजिये।

**अबोहर, पंजाब।**

ऐतिहासिक कलम से....

# महर्षि दयानन्द के वेद-भाष्य की विशेषतायें

**स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती**

आस्तिकता का अर्थ परमात्मा के अस्तित्व में (उसके सच्चिदानन्द स्वरूप एवं सृष्टिकर्त्ता और सृष्टिनियन्ता होने में) श्रुति-रूप उससे उद्भूत ज्ञान एवं उसकी उस समस्त रहस्यमयी चेतनता जो उसकी रचना में अभिव्यक्त है और प्रभु की न्याय और दयापूर्ण व्यवस्था में विनम्र आस्था का रखना है। यही बात वेदान्त के सूत्रों, **जन्माद्यस्य यतः शास्त्रयोनित्वात्** और **तत्तु समन्वयात्**, से अभिव्यक्त होती है और यही बात ऋषि दयानन्द द्वारा अभिप्रेत आर्यसमाज के प्रथम नियम और अन्य नियमों से स्पष्ट है।

भारतीयों ने वेदमन्त्रों की अक्षुण्ण परम्परा को आज तक जीवित रखने के लिए बड़ी तपस्या की और उनकी उस तपस्या का ही फल है कि जहाँ संसार की अन्य भाषाओं का प्राचीनतम साहित्य लुप्त हो गया, वेद की संहितायें आज तक उपलब्ध हैं। किन्तु जहाँ संहिताओं को हमने सुरक्षित रखा, वेद का अभिप्राय, उनके मन्त्रों की गरिमा की भावनायें और ऋचाओं में निहित प्रेरणा देने वाली और स्फूर्ति सम्बन्धी क्षमतायें कालान्तर में लुप्त हो गयीं। वेदपाठी तो रहे, पर वेद के मन्त्र जीवन को स्फूर्ति भी दे सकते हैं-यह भावना कई सहस्र वर्षों से लुप्त हो गयी थी। एक वह दिव्य युग था जब श्रुति को समझने के लिए समस्त शास्त्रों की रचना की गयी, श्रुति से प्रेरणा पाकर तपस्वी मानव ने वेदांगों और उपांगों की रचना की और यज्ञस्थली के प्रांगण में ज्ञान-विज्ञान का विकास किया। महाभारत के बाद से देश का अधः पतन हुआ और वेद प्रेरणा का स्रोत न होकर केवल वेदपाठियों की संकुचित परम्पराओं और रूढ़ियों की शृंखला में बँध गया। वेद में आस्था तो रही, किन्तु इस आस्था का उपयोग कुत्सित कृत्यों और अन्धविश्वासों के समर्थन में किया जाने लगा। इस वातावरण में स्कन्द स्वामी, उद्गीथ, वेंकटमाधव, मुद्गल, सायण, महीधर, उव्वट आदि विद्वानों ने अपने वेदभाष्यों की रचना की। इन्हीं भाष्यों को भारतीय आस्था का प्रतीक मानकर यूरोपीय विद्वानों ने अंग्रेजी, जर्मन, फ्रेंच और रूसी भाषा में वैदिक साहित्य के अनुवाद किए।

यूरोप में विज्ञान और शिल्प का नये ढंग से विकास आरम्भ हुआ। बाइबिल को आधार मानने वाले ईसाइयों ने विज्ञान और धर्म के बीच में संघर्ष खड़ा कर दिया। पिछली दो-तीन शतियों का इतिहास इस संघर्ष की करुण कहानी है। विज्ञान की विजय हुई और बाइबिल पर आधारित धर्म के आचार्यों ने विज्ञान के साथ धीरे-धीरे समझौता करने की चेष्टा की। उन्नीसवीं शती के इतिहास में महर्षि दयानन्द ही अकेले ऐसे आचार्य हैं, जिन्होंने विज्ञान और शिल्प के प्रति अनुराग प्रदर्शित किया और विज्ञान के उत्तरोत्तर बढ़ते हुए चरणों का स्वागत किया। उनकी दृष्टि में धर्म, दर्शन और विज्ञान सब का उद्देश्य एक है-ईश्वर के प्रति श्रद्धा, सत्य का समादर और लोक-कल्याण की भावना। प्राचीन ऋषियों का भी यही दृष्टिकोण था। महर्षि का वेद-भाष्य इन भावनाओं से ओत-प्रोत है। ऋषि दयानन्द के वेद भाष्य की निम्न विशेषतायें हैं- (१) श्रुति के शब्द अर्थों की दृष्टि से यौगिक और योगरूढि हैं न कि रूढि, शास्त्र में और कालान्तर में बनी सभी भाषाओं में शब्दों के रूढि अर्थों को प्रश्रय मिलने लगता है। (२) श्रुति परमात्मा से उद्भूत होने के कारण स्वतः प्रमाण है और श्रुति-वाक्यों में समस्त प्राकृत पदार्थों के समान विविध-अभिप्रायों को व्यक्त करने की स्वाभाविक प्रकृति या क्षमता है। (३) आस्तिकता का अभिप्राय एक नियन्ता में आस्था रखने से है, वही सृष्टि की समस्त चेतनाओं का स्रोत है अतः वेद में ऐसा देवता-वाद नहीं है, जिसमें स्वतन्त्र नियामक देवताओं की कल्पना हो। (४) आदि और शाश्वत ज्ञान होने के कारण वेद में शाश्वत इतिहास को छोड़ कर किसी भी अन्य प्रकार के इतिहास की कल्पना करना वेद के महत्त्व को ठीक से नहीं समझना है। (५) सृष्टि का रचयिता प्रभु है और श्रुति का स्रोत भी वही, अतः श्रुति के अभिप्राय में और सृष्टि सम्बन्धी ऋत और सत्य में कोई विरोध और संघर्ष नहीं होना चाहिए। (६) सृष्टि प्रभु की सोद्देश्य रचना

है, इस दृष्टि से यह सत्य है कल्पना नहीं है, न मिथ्या है, न अभ्यास; मानव शरीर भी सत्य है, और मानव जीवन भी सत्य और जीवन का प्रवाह भी सत्य है।

अत: लोक-परलोक, संभूति-असंभूति, अभ्युदय-नि:श्रेयस, परा और अपरा, ज्ञान और कर्म इन सबका समन्वय ही शाश्वत सत्य है। वेद इस समन्वय का प्रतिपादक है। वेद की ऋचायें इस लोक के वैभव का तिरस्कार नहीं करती हैं, इसकी वे समर्थक उतनी ही हैं, जितनी कि अध्यात्म की, (७) परमात्मा आचार और निष्काम धर्म का परम आदर्श और आदि स्रोत है अत: कोई भी श्रुति-वाक्य आचार-धर्म और लोक-कल्याण का विरोधी नहीं हो सकता। श्रुति के अर्थ न तो हिंसा-परक लगाये जा सकते हैं, और न आचार के विरोधी।

प्राचीन ऋषियों और आचार्यों का भी यही दृष्टिकोण था और प्रत्येक आस्तिक का भी यही दृष्टिकोण है। महर्षि का वेद भाष्य इसी दिशा में अनुपम प्रयास है। कर्मकाण्ड की शृंखला और अनुचित विनियोगों से महर्षि दयानन्द ने वेदों को उन्मुक्त और फिर से जीवन की ओर प्रेरणादायक घोषित किया, यह उनका परम-उपकार है। हमें उन सब देशी-विदेशी मनीषियों के प्रति विनम्र आभार प्रदर्शित कराना चाहिए जिन्होंने वेद के अनुशीलन के संबन्ध में किसी भी प्रकार की तपस्या क्यों न की हो। महर्षि दयानन्द के प्रति तो सबसे अधिक श्रद्धा की भावनाएँ हैं, जिन्होंने वेदार्थ के संबन्ध में हमें दिव्य ज्योति दी। ऋषि की तपस्या और आर्यसमाज के प्रयास से पिछले सौ वर्षों में भारत में ही नहीं, भारत के बाहर भी वेदों के प्रति रुचि उत्तरोत्तर बढ़ी है, यह सन्तोष की बात है। प्रभु में आस्था बढ़े और प्रभु के श्रुति शब्द हमारे लिए जीवन प्रेरक बनें, यह मेरी कामना है। **साभार- जनज्ञान ( मासिक ) अक्टूबर १९७५**

## भारत माता की फ़रियाद

**विजय 'अरुण'**

भारत माता आज कहे ये होकर फ़रियादी।
यह मत भूलो कैसे पाई मैंने आज़ादी।।

कितने ही तो वृद्ध, युवक और बाल मिले मिट्टी में।
मेरे कितने हीरे जैसे लाल मिले मिट्टी में।।
सदियों तक देखी है मैंने कितनी बर्बादी।
भारत माता आज कहे ये होकर फ़रियादी।
यह मत भूलो कैसे पाई मैंने आज़ादी।।

हाए! न जाने कितने अपने सुख आराम को भूले।
मेरे बन्धन आप काटने को फाँसी पर झूले।।
कितनों ने हँसते-हँसते प्राणों की भेंट चढ़ा दी।
भारत माता आज कहे ये होकर फ़रियादी।
यह मत भूलो कैसे पाई मैंने आज़ादी।।

मिलजुल कर सब रहो तुम्हें अलगाव न घेरें बच्चो!
मेरी आज़ादी को क़ायम रखो मेरे बच्चो!!
कहीं अभी तो हुई हूँ जाकर आज़ादी की आदी।
भारत माता आज कहे ये होकर फ़रियादी।
यह मत भूलो कैसे पाई मैंने आज़ादी।।

## विद्वान् एकमत हो प्रीति से वर्ते

यद्यपि आजकल बहुत से विद्वान् प्रत्येक मतों में हैं, वे पक्षपात छोड़, सर्वतन्त्र सिद्धान्त अर्थात् जो-जो बातें सबके अनुकूल सब में सत्य हैं, उनका ग्रहण और जो एक-दूसरे के विरुद्ध बातें हैं, उनका त्याग कर परस्पर प्रीति से वर्तें वर्तावें तो जगत् का पूर्ण हित होवे। क्योंकि विद्वानों के विरोध से अविद्वानों (साधारण जनों) में विरोध बढ़कर अनेकविध दु:ख की वृद्धि औरसुख की हानि होती है।

(स. प्र. भू.)

# हैदराबाद मुक्ति संग्राम - एक विहगावलोकन

**अपर्णा शुक्ल**

भारत को १५ अगस्त १९४७ को स्वतन्त्रता मिली, यह सभी जानते हैं। लेकिन भारत का ही एक भू-भाग ऐसा था जिसे इसके १३ महीनों बाद स्वतन्त्रता मिली। सुदूर दक्षिण में रियासते निज़ाम ही वह रियासत थी, जिसके शासक अपने हैदराबाद राज्य को खुदमुख्तार सल्तनत यानी एक स्वतन्त्र राष्ट्र बनाये रखना चाहते थे और इसके लिये उन्होंने संयुक्त राष्ट्र तक भी दौड़ लगाई थी। एक दूसरा विचार उनका यह भी था कि पूर्व और पश्चिम की तरह पाकिस्तान का एक भाग दक्षिण में स्थापित हो, जिन्ना से इस बाबत उनका सम्पर्क बना हुआ था। लेकिन अंततः सरदार पटेल की कूटनीति के आगे उन्हें घुटने टेकने पड़े।

हैदराबाद भारत की सभी ५६५ रियासतों में क्षेत्रफल में, जनसंख्या में सबसे बड़ी रियासत थी। निज़ाम की गिनती भारत ही नहीं बल्कि दुनिया के अमीर लोगों में होती थी। मीर उस्मान अली ख़ान निज़ाम उल मुल्क आसफ़ज़ाही राजवंश के सातवें व अंतिम शासक थे। ६ अप्रैल १८८६ को जन्मे तथा २४ फरवरी १९६७ को मृत्यु हुई। १८ सितम्बर १९११ को इनका राजतिलक हुआ था। शासन १७ सितम्बर १९४८ तक चला।

अपने पूर्वजों की भाँति शासन के शुरुआती वर्षों में उन्होंने जनकल्याणकारी धर्मनिरपेक्ष राजा के रूप में अपनी हिन्दू बहुल जनता का दिल जीता। हैदराबाद का हाईकोर्ट भवन, उस्मानिया विश्वविद्यालय स्थापत्य कला के उत्कृष्ट नमूने इनके द्वारा ही बनाये गये हैं। निज़ाम सागर, गंडीपेट आदि बाँधों द्वारा सिंचाई और पेयजल की व्यवस्था भी शासक द्वारा की गई। मंदिरों को सरकारी सहायता और सरकारी जागीरें अता हुईं थीं।

शिक्षा के क्षेत्र में उस्मानिया विश्वविद्यालय की स्थापना कर उच्चतर शिक्षा की सुविधा प्रदान की। उर्दू भाषा पर इतना प्रेम था कि सारे डिग्री कोर्स एम.ए., पीएच.डी. ही नहीं बल्कि एल.एल.बी., एल.एल.एम., एम.बी.बी.एस., एम.एस. तक की शिक्षा उर्दू माध्यम से दी जा रही थी। अनुवाद ब्यूरो की स्थापना कर सभी संकायों की पाठ्य पुस्तकें उर्दू में उपलब्ध कराईं। शासन की सब कार्यवाही, प्रिवी काउंसिल के कामकाज, गज़ट, साइटेशन्स, आदि तक उर्दू में ही होते थे।

इतने अमीर होने के बावजूद निज़ाम अपने सादे रहन-सहन के लिए विख्यात थे। उनकी मातृभक्ति भी प्रसिद्ध थी, प्रतिदिन शाम को पुरानी फोर्ड कार में अपनी माँ की कब्र पर फूल चढ़ाने नियमित रूप से जाते हुए सादी शेरवानी, पाजामा, काली टोपी, जूते पहने जनता उन्हें देखा करती थी।

१९२७ में मजलिस ए इत्तेहाद उल मुसलमीन का गठन निज़ाम की सलाह पर नवाब महमूद नवाज़ ख़ान ने किया, जो कट्टरता के पक्षधर थे। स्थापना से लेकर १९४८ तक यह संगठन अलग मुस्लिम राष्ट्र की, शरिया कानून सब पर लागू करने की वकालत करता रहा। बाद में नवाब बहादुर यार जंग और क़ासिम रिज़वी जैसे नेताओं के साथ इस संस्था की कट्टरता बढ़ती गई। क़ासिम रिज़वी का प्रभाव निज़ाम पर दिनोंदिन बढ़ता गया। रिज़वी ने रज़ाकार सेना का गठन कर हिन्दुओं पर ज़ुल्म ढाने शुरु किये। रज़ाकार शासन द्वारा पोषित आतंकवादी थे, जिन्हें हिंदुओं पर ज़ुल्म ढाने की पूर्ण स्वतन्त्रता थी।

इस प्रकार रियासत का माहौल बिगड़ने लगा। जहाँ सभी धर्मावलम्बी आपस में प्रेम व भाईचारे से रहा करते थे, वहाँ शासक क़ौम और शासित क़ौम की भावनायें जगा कर धर्म-परिवर्तन के लिये मजबूर किया जाने लगा। हिंदुओं के धार्मिक आयोजन, त्यौहार, जुलूस, मंदिरों के निर्माण, मरम्मत, उद्घाटन, नई मूर्ति की स्थापना आदि के लिए शासन की पूर्व आज्ञा अनिवार्य कर दी गई । हिन्दू छात्रों को धार्मिक शिक्षा मुसलमान शिक्षकों द्वारा उर्दू माध्यम से देने के फरमान जारी हुए। वन्दे मातरम् गीत पर रोक लग गई। मस्जिद के आस-पास के मन्दिरों, मकानों में बाजा ही नहीं अपितु ग्रामोफोन, रेडियो, रिकॉर्ड बजाने की भी मनाही कर दी गई। निज़ाम-स्तुति का गीत सभी स्कूलों में

प्रतिदिन गाना अनिवार्य कर दिया गया। हिन्दी पर पाबंदी लगी इस डर से कि शेष भारत की तरह स्वतन्त्रता की हवा न चल पड़े। रियासत की जनता की अन्य भाषाओं तेलुगु, कन्नड़ व मराठी को भी हिन्दुओं की मान कर उनसे भी द्वेष किया जाने लगा।

रियासत का हिंदू समाज जनसंख्या की दृष्टि से ८८ प्रतिशत होकर भी अशिक्षित, असंगठित, सामाजिक पिछड़ेपन, अन्ध-श्रद्धा, अस्पृश्यता, आदि कुरीतियों से ग्रस्त था। उनकी वेशभूषा, व्यवहार आदि पर शासकों की छाप स्पष्ट थी। शासन की जन विरोधी नीतियों तले साधारण जन पिसने लगे, हताश निराश लोगों को सहानुभूति देने वाला भी कोई नहीं दिखाई देता था। ऐसे में उन्हें आर्यसमाज में आशा की एक किरण नज़र आई। बाद में आर्यसमाज का यह वट वृक्ष रियासत में ऐसा फला- फूला कि यदि १९४८ में स्वतन्त्रता के बाद आर्यसमाज ने राजनीति से दूर रहने का संकल्प नहीं लिया होता, तो निश्चित रूप से पहली लोकतान्त्रिक सरकार आर्यसमाज की ही बनती।

१८७५ में महर्षि दयानन्द द्वारा मुम्बई में स्थापित आर्यसमाज सम्पूर्ण भारत में सामाजिक, राजनीतिक, शैक्षणिक, धार्मिक सभी क्षेत्रों में एक आन्दोलन के रूप में अपना वर्चस्व स्थापित कर चुका था। काँग्रेस के इतिहासकार डॉ. पट्टाभिसीतारामैया ने भी माना है कि भारत के स्वतन्त्रता आंदोलनकारियों के सर्वेक्षण के अनुसार ८० प्रतिशत स्वतन्त्रता सेनानी आर्यसमाज के माध्यम से आए थे।

हैदराबाद रियासत में १८८० में पहला आर्यसमाज धारूर ग्राम में आरम्भ हुआ। १८९२ में हैदराबाद के सुलतान बाज़ार इलाके में शुरू किया गया। प्रसिद्ध वकील व देशभक्त पं. केशवराव कोरटकर, जो बाद में हैदराबाद हाईकोर्ट के जज मनोनीत हुए, अनेक वर्षों तक इस आर्यसमाज के प्रधान रहे। उन्होंने राज्यभर में समाज की शाखाओं के साथ-साथ अनेक स्कूल व लाइब्रेरियाँ खोलने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया। उनके पुत्र पं. विनायकराव विद्यालंकार भी यथासमय उनके साथ आ जुड़े। इनके अलावा चंदूलाल जी, सूर्यप्रताप जी, चंद्रपाल जी, गजानंद जी, पं. दत्तात्रेय प्रसाद एडवोकेट आदि महत्त्वपूर्ण हस्तियाँ भी समाज में सक्रिय थीं। नई पीढ़ी के भ्रातृद्वय हाईकोर्ट के वकील भाई बंसीलाल व भाई श्यामलाल ने, जो मेरे नानाजी थे, तथा (डॉ. धर्मवीर जी की नानी के भाई थे) सारे हैदराबाद राज्य में आर्यसमाज के प्रचार की धूम मचा दी थी। उनकी असाधारण योग्यता, वीरता, साहस और सत्यनिष्ठा की सभी प्रशंसा करते थे।

उत्तर भारत से प्रसिद्ध उपदेशकों को समाज के वार्षिकोत्सवों पर आमन्त्रित किया जाता था, ऐसे समय पर अपने सारे दुःख-दर्द भुलाकर जनसमुद्र उमड़ पड़ता था। अक्सर ऐन वक्त पर निज़ाम शासन की ओर से प्रतिबन्ध जारी कर दिए जाते थे। जुलूसों पर रोक लग जाती थी। पं. केशवराव कोरटकर, जो निज़ाम शासन में हाईकोर्ट जज थे, उनकी अन्तिम यात्रा में कोतवाल ने अचानक फरमान निकाल दिया कि केवल शोक प्रस्ताव पारित होगा, कोई नारे या भाषण नहीं होंगे। ऐसे अवसरों पर जन-आक्रोश व असंतोष अपनी चरम सीमा पर पहुँच जाता तथा भीड़ को संभालना बहुत मुश्किल हो जाता था।

राज्य में गुलबर्गा, हल्लीखेड़, उदगीर की आर्यसमाजें भाई बंसीलाल व भाई श्यामलाल के नेतृत्व में बहुत सक्रिय हो चुकीं थीं। उनके आसपास के गाँवों में भी आर्यसमाजों का जाल सा बिछ गया था। दोनों भाई सिद्धांतों के बारे में कट्टर थे और जो भी उपदेश देते, स्वयं उस पर आचरण करते थे। उनके धर्म-प्रचार ने लोगों को दीवाना बना दिया था। सबसे प्रेम, ईश्वर भक्ति, वेद वाणी की सीख सबको देते हुए दोनों भाई चलते-फिरते आर्यसमाज बन चुके थे। सभी ग्रामवासी उनके कहने पर जान भी कुर्बान करने को तैयार थे क्योंकि भ्रातृद्वय धर्म, समाज और राष्ट्र के लिये तन-मन-धन से समर्पित थे।

उन्होने धर्म का सच्चा अर्थ जनता को समझाया कि उत्तम गुणों का धारण ही धर्म है। पाखंड छोड़ो, व्यसन छोड़ो, जातपांत छोड़ो, ऊँच-नीच छोड़ो, दहेज, बालविवाह का विरोध, स्त्री-पुरुष समानता, आपस में एकता बढ़ाओ, विरोध बढ़ाने वाले विचारों, भावनाओं को दूर करो, श्रेष्ठ मानव जाति का निर्माण करो। ऐसे उपदेशों पर युवक वर्ग बिछा जाता था। आर्यसमाज के झंडे तले चिटगोपा, दुबलगुंडी, हुमनाबाद, कल्याणी, भालकी, माणिकनगर जैसे

ग्रामों से लेकर राजधानी हैदराबाद तक युवा संगठन तैयार होने लगे। युवाओं के लिये समाज भवन के साथ-साथ व्यायामशालाओं की स्थापना कर शारीरिक सुदृढ़ता का पाठ पढ़ाया। वाचनालय, पुस्तकालयों द्वारा बाल, तरुण, वृद्ध सभी में ज्ञान प्रसारण किया और उन्हें सर्वांगीण विकास की ओर प्रेरित किया। आर्यसमाज के उत्सवों में विद्वानों को सुनने दूर-दूर के गाँवों से हज़ारों लोग जमा होते थे। बहुसंख्य हिन्दुओं में चैतन्य का संचार होने लगा। साथ ही दोनों भाइयों ने अल्पसंख्यकों का आदर भी प्राप्त किया। खुद पुलिसवाले भी विविधधर्मियों के बीच शान्ति स्थापित करने हेतु इनकी सहायता लेने लगे।

कई प्रगतिशील कार्यक्रमों का जैसे सामूहिक प्रीतिभोज, अस्पृश्यता आदि का पुरातनपंथी हिन्दुओं द्वारा भी कड़ा विरोध होता था और इन विरोधियों में इन भाइयों के अपने रिश्तेदार भी शामिल रहते थे। जैसे बंसीलाल जी की शादी में दुल्हन के अपना जनेऊ खुद पहनने पर ससुरालवालों से झगड़ा हुआ और दोनों तरफ़ से बन्दूकें निकल आईं। हिन्दुओं में आज भी पत्नी का जनेऊ पति ही पहनता है। यह एक नमूना है कि आर्यसमाज तीन-चार पीढ़ियाँ पहले भी कितना प्रगतिशील हुआ करता था। पत्नी विद्यावती देवी का भरपूर साथ मिला, जो महिलाओं को उन्नति की राह पर चलना सिखाती थीं। पति बंसीलाल जी की मृत्यु के पश्चात् भी विद्यावती जी ने वैदिक सिद्धांतों की ज्योत जलाए रखी। अकेली विधवा जानकर रिश्तेदारों के दबाव में न आकर अपनी सातों संतानों का अन्तर्जातीय विवाह कर उदाहरण प्रस्तुत किया। अपने पति के अंतिम शब्दों को उनकी अंतिम इच्छा मानकर परिवार में संस्कृत संभाषण को बढ़ावा दिया, बच्चों को पूरा-पूरा आर्य बनाया। अन्तिम श्वास तक आर्यसमाज का प्रचार करती रहीं।

इसी प्रकार उदगीर में शिवरात्रि पर तथा लातूर में होली पर आयोजित सामूहिक प्रीतिभोज के कार्यक्रमों में कई निकट संबन्धियों का शुरू में विरोध रहा, पर बंसी-श्याम के अपने सिद्धांतों पर अडिग रहने, स्वार्थ से ज्यादा समाज के हित की परवाह करने के कारण उन्हें अपनी कट्टरता छोड़नी पड़ी। अनेक तथाकथित हरिजनों को पुरोहित बनाकर छोड़ा। बहुत सारे हिन्दू मांसाहार, नशीले पदार्थों का सेवन छोड़कर पक्के आर्यसमाजी बन गए।

लेकिन यह सब मुसलमान कट्टरपंथियों को नागवार गुज़रने लगा। वे तो हिन्दुओं को उनके धर्म की कमियाँ बताकर उनका धर्म-परिवर्तन कर मुसलमानों की संख्या बढ़ाने में लगे हुए थे। कहीं बहला-फुसला कर, तो कहीं दहशत फैला कर इस काम को अंजाम देने में लगे हुए थे। रज़ाकार और रोहिले हिन्दू जनता पर अत्याचार करने में सबसे आगे थे, उन्हें शासन का कभी खुला-कभी छिपा समर्थन प्राप्त था। महिलाओं पर अत्याचार करने से भी वे बाज़ नहीं आते थे। उदगीर के तहसीलदार जान मोहम्मद द्वारा सीधे-सीधे गुंडों की तरफदारी कर जनता पर अत्याचार करने में उनकी मदद करने पर श्यामलाल जी ने उनके खिलाफ़ आवाज़ उठाई। चिढ़कर जान मोहम्मद ने शासन में उनकी झूठी शिकायतें भेजनी शुरु कर दीं। अमन शान्ति को उनसे धोखा बताकर घर के आगे सशस्त्र पहरा बिठा दिया। धार्मिक जुलूस पर आक्रमण कर श्यामलाल जी को बचाव में हवाई फायर करने पर मजबूर किया और गुंडों के हताहत होने की अफवाह फैलाकर उनके घर पर हमला कर दिया। जब इस तरह की वारदातें बढ़ने लगीं तो कोर्ट की पनाह लेकर गरीबों के मुकदमे दोनों भाई मुफ़्त में लड़ने लगे। शासन की ओर से भी अनेक झूठे मुकदमे दोनों पर व अन्य निरपराधों पर दाख़िल कर उन्हें तंग किया जाता था।

परन्तु दोनों भाइयों के मन में किसी के प्रति द्वेष न था। आयुर्वेद का अच्छा ज्ञान होने से सभी का मुफ़्त में इलाज कर और दवाइयाँ भी देते थे। एक पुलिस के सिपाही ने श्यामलाल जी को मारने की सुपारी ली थी। उसे प्लेग होकर मरणासन्न अवस्था में घरवालों के भी छोड़ने पर अपनी जान की परवाह न कर उसका सफल इलाज कर उसे चंगा कर डाला।

दीनदार सिद्दीकी नामक स्वघोषित बसवेश्वर के अवतार की पोल इन्होंने खोली। पठानों के जाल में अटके अनेकों परिवारों को मुक्त करवाया। ढोंगी पीर औलियाओं से समाज को बचाने के लिये बौद्धिक मोर्चा खोला। उत्तर

भारत से अच्छे वक्ताओं को आमन्त्रित किया, जैसे पं. मंगलदेव शास्त्री, पं. रामचन्द्र देहलवी, आदि। देहलवी जी संस्कृत के साथ साथ उर्दू, अरबी, फारसी के अच्छे ज्ञाता थे। उनकी क़ुरान की आयतें सुनकर बड़े-बड़े मौलवी भी दाँतों तले अँगुली दबाते थे। उन्हें सुनने आर्यसमाज के जलसों में हज़ारों की भीड़ उमड़ती थी। ऐसे मधुरभाषी वक्ता पर परेशान हुकूमत ने धर्म के अपमान का आरोप लगाकर बीदर की अदालत में चालान पेश कर दिया। इस मुकदमे के कारण सारे भारत में क्रोध की लहर दौड़ गई। बँसीलाल जी व श्यामलाल जी राज्य भर में जोर-शोर से आर्यसमाज का प्रचार करते थे, उनकी जान को हर समय खतरा लगा रहता था। सरकार और रज़ाकारों की ओर से उन्हें खतम करने के लिये अनेक षड्यन्त्र रचे जा रहे थे। गुंजोटी में वेदप्रकाश की हत्या हुई। प्रथम शहीद के बलिदान पर उत्तेजित पच्चीस हज़ार की भीड़ को बंसीलाल जी ने अपने उद्‌बोधन से शान्त किया। अनेक आर्यसमाजी कार्यकर्त्ताओं पर अत्याचार जारी रहे।

१९३८ में हर वर्ष की तरह आर्यसमाज उदगीर की ओर से होली का जुलूस निकाला गया। अचानक मुसलमानों ने हमला कर दिया, दोनों ओर के लोग जख्मी हुए और एक व्यक्ति मारा गया। इसी बहाने भाई श्यामलाल जी को सोलह साथियों सहित हत्या के आरोप में पुलिस ने गिरफ़्तार कर लिया। श्यामलाल जी पर भी गोली दागी गई, जबकि वे वातावरण शान्त करने में व्यस्त थे। उन्हें अपनी मोटर में छोड़ने के बहाने पुलिस धोखे से पुलिस स्टेशन ले गई। जन विक्षोभ को देखते हुए उनको बीदर जेल ले जाया गया। उदगीर की जनता के विरोध प्रदर्शन पर लाठी चार्ज हुआ। बीदर जेल का जेलर श्यामलाल जी से प्रभावित होकर उनका भक्त बन घर से दूध-फल लाकर देता था। उसकी बदली कर दी गई। नए जेलर ने हथकड़ी बेड़ी लगवा दी। दैनिक संध्या-हवन पर बंदी लग गई। जेल के भोजन से वे बीमार पड़ गए। दवाई के नाम पर दरोगा ने ज़हर गले में उतार दिया। डाक्टर को बुलाना दूर, प्यास लगने पर पानी भी नहीं दिया। भाई जी ने विष का अन्दाज़ होने पर पत्र लिखा व एक साथी को बंसीलालजी तक पत्र पहुँचाने की विनती की। सारी तकलीफ़ ओ३म् का जप करते हुए सहन की। १७ दिसम्बर १९३८ को श्याम भाई ने प्राण त्याग दिये।

भाई श्यामलाल जी के बलिदान से राज्यभर में कोहराम मच गया। आर्यों का लोकप्रिय, हृदय-प्राण, दुःखों का साथी, हिन्दुओं का रक्षक उनके लिए अपने जीवन की आहुति दे गया था। शव सोलापुर ले जाकर डॉक्टरों द्वारा विच्छेदन कर विषबाधा मृत्यु का कारण निश्चित किया गया। अंतिम दर्शन के लिए हज़ारों की भीड़ उमड़ पड़ी। निज़ाम के विरुद्ध जनमानस का असन्तोष भारत भर में चरम सीमा तक पहुँच चुका था। अन्ततः सार्वदेशिक आर्य सभा, दिल्ली की ओर से ऐतिहासिक हैदराबाद सत्याग्रह का बिगुल बजा दिया गया।

भारत भर से सत्याग्रहियों के जत्थे पर जत्थे हैदराबाद पहुँचने लगे। महात्मा नारायण स्वामी, कुँवर चाँदकरण शारदा, लाला खुशहालचन्द, राजगुरु धुरेन्द्र शास्त्री, वेदव्रत आर्य, महाशय कृष्ण, पं. ज्ञानेन्द्र व पं. विनायकराव विद्यालङ्कार के नेतृत्व में सत्याग्रहियों की भीड़ जमा होती गई। हैदराबाद केन्द्रीय कारागार में ही तीन हज़ार के लगभग सत्याग्रही थे। कुछ जत्थों को रास्ते में ही रोक कर गुलबर्गा, अहमदनगर, नान्देड़, औरंगाबाद, आदि जेलों में ठूँस दिया गया। निज़ाम सरकार की सारी जेलें भर जाने पर खुले मैदानों में बाड़ बनाकर कंकड़ियों की फर्श पर जेलें बनाई गईं। जेलों की बदइंतज़ामी, खराब भोजन व इलाज के कारण इक्कीस महानुभावों की जान कुरबान हो गई और सैकड़ों बीमार हो गए। हवन-सत्संग के लिये जेल में अनशन करना पड़ा और सारी जेलें वेद-मन्त्रों व भजनों से गूँजने लगीं। इतने बड़े पैमाने पर बिलकुल अहिंसक सत्याग्रह की धुरी पं. बंसीलाल जी ने आर्य प्रतिनिधि सभा, हैदराबाद के मन्त्री के रूप में संभाल रखी थी। भारत भर से आये सत्याग्रहियों, नेताओं की व्यवस्था, आने-जाने, स्वागत का प्रबन्ध सारी जिम्मेदारी आपने ही उठा रखी थी।

आर्य जनता के इस विराट अहिंसक प्रदर्शन से निज़ाम सरकार घबरा उठी। निजाम के नियन्त्रण के बावजूद सारे देश की आर्य पत्र-पत्रिकाओं में सत्याग्रह की खबरें छपतीं जा रहीं थीं। इंग्लैंड की पार्लियामेंट में भी इसकी गूँज

सुनाई दी। आर्यसमाज के नेता दिल्ली में महात्मा गाँधी के सम्पर्क में थे, उन्होंने भी निज़ाम के प्रधानमन्त्री सर अकबर हैदरी से सम्पर्क कर प्रभाव डाला कि आर्यसमाज की सभी माँगों को मान लिया जाए। अन्ततः शक्तिशाली निज़ाम को घुटने टेकने पड़े। आर्यसमाज की सभी माँगें मान ली गईं। इस सत्याग्रह में हैदराबाद की अन्य संस्थाओं जैसे हिन्दू महासभा, महाराष्ट्र परिषद आदि का भी सहयोग मिला। भारत भर से जो आर्यजनों ने विशाल धनराशि इस हेतु भेजी थी, उसमें से बची हुई राशि सोलापुर में सत्याग्रह के स्मारकरूप दयानन्द कॉलेज खोलने के लिए बंसीलाल जी के सुपुर्द कर दी गई। इसी बीच उन्हें तीसरे पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई, इस जीत के उपलक्ष्य में उसका नाम विजय रखा गया। सरदार पटेल ने पुलिस ऐक्शन का बाद में वर्णन करते हुए स्वीकारोक्ति दी थी कि यदि आर्यसमाज ने हैदराबाद सत्याग्रह नहीं किया होता तो हमें (भारत सरकार को) तीन दिन में सफलता मिलनी सम्भव न थी।

आर्यसमाज का प्रचार करते हुए भाई बंसीलाल जी ने अपनी चार सन्तानों के साथ-साथ कतिपय परिवारों के बच्चों को भी उत्तर भारत के गुरुकुलों में प्रवेश दिलवाया था। उनकी हार्दिक कामना थी कि दक्षिण भारत में भी गुरुकुल स्थापित हों। इस प्रकार श्यामार्य गुरुकुल की स्थापना हुई और बंसी भाई प्राणपण से गुरुकुल चलाने में जुट गए। लड़कों के बाद पृथक् कन्या गुरुकुल भी महर्षि दयानन्द की बताई शिक्षा पद्धति पर चलने लगा। अपने दोनों बेटे व दोनों बेटियों को भी श्यामार्य गुरुकुल में ले आए। धीरे-धीरे छात्र-छात्राओं की संख्या बढ़ने लगी और राजूर की जगह छोटी पड़ने लगी। बार्शी में गुरुकुल स्थानान्तरित हुआ। आर्यसमाज का प्रचार जारी था, स्वतन्त्रता-युद्ध भी। कई बार रज़ाकारों द्वारा उन पर हमले हुए, पर अपने गुरु महर्षि दयानन्द के समान वह हमलावरों को क्षमा करते रहे। सरकार भी उन पर नज़र गड़ाए थी, पर अपनी जागरूकता व नीति के कारण निज़ाम के चंगुल से वे अपना बचाव करते रहे। गुरुकुल को निज़ाम राज्य की सीमा के पास ले जाना तय हुआ, ताकि ज़रूरत पड़ने पर आसानी से सीमा पार कर सकें। सरकार के अलावा कई बार अपनों से भी धोखा खाया। गुरुकुल स्थानान्तरण में गाय, बैल, भैंस, कुत्ते आदि पशुओं को रेलवे से ले जाने की बंदी के कारण पैदल ही निकल पड़े, साथ में छात्र ब्रह्मचारी भी थे, जिनमें उनके दोनों बेटे वेदभूषण एवं सत्यव्रत और अन्य सहकारी थे।

राह में एक गाँव में रुके, वहीं रुकने की व्यवस्था थी। पर पड़ौस के एक गाँव से कुछ कार्यकर्त्ता अपने गाँव चलने की जिद करने लगे। गाँव में एक वैद्य के आँगन में सब लोग जमा हुए, व्याख्यान दिया। कार्यकर्त्ताओं ने भोजन का आग्रह किया तो देर रात भोजन करने से मना कर दिया। तब दूध लेने की जिद की तो नानाजी ने ले लिया। उसके बाद रात भर बेचैनी रही। सुबह चार बजे सारा कारवाँ लिए आगे चल पड़े। कुछ प्रकाश होने पर अंगुलियाँ काली-नीली नज़र आने पर विष-प्रयोग का शक हुआ। बेचैनी, कमज़ोरी बढ़ने पर बैलगाड़ी पर सवार हुए। स्वयं वैद्य थे, दवाइयाँ साथ लिये चलते थे। पर दवाई काली इमली के साथ लेनी थी। जेऊर गाँव पूरा छान मारा, पर इमली नहीं मिली। आवाज़ मन्द होने लगी। सरकारी दवाखाने ले जाने के लिये क्षीण आवाज़ में साथियों से कहा, पता चला खुदबा की छुट्टी है। बंसी भाई बोले-खुदबा माने खुदा के पास जाने का दिन। साथियों से कहा, गुरुकुल और हैदराबाद स्वतन्त्रता आन्दोलन का काम जारी रहे। .....और वे अनन्त में विलीन हो गए। उनका अन्तिम संस्कार भी जेऊर में ही कर दिया गया। पत्नी विद्यावती जी को जिन्दगी भर अपने पति के अन्तिम दर्शन न करने का अफ़सोस रहा। मृत्यु के समय बंसी भाई की उम्र मात्र ४८ वर्ष की थी। अपने पीछे पत्नी के अलावा २ वर्ष से लेकर १८ वर्ष तक की सात सन्तानें छोड़ गए थे, जिनमें केवल एक पुत्री का विवाह हो चुका था। इस तरह हैदराबाद के स्वतन्त्रता सूर्य उदय होने से सवा महीना पहले ही आर्यजगत् के सर्वमान्य नेता व हैदराबाद सत्याग्रह के स्रष्टा भाई बंसीलाल रूपी सूर्य ७ अगस्त १९४८ को अस्त हो गया।

लौहपुरुष सरदार वल्लभभाई पटेल द्वारा हैदराबाद रियासत की परिस्थिति पर विचार विनिमय करने के लिए तार द्वारा बंसीभाई को आमन्त्रित कर सफल चर्चा भी हो

चुकी थी। उन्होंने सरदार से १५ अगस्त १९४७ को शेष भारत की स्वतन्त्रता के बाद राज्य की हिन्दू जनता की अधीरता के बारे में भी बताया था। १९४८ के पहले तीन महीनों में राज्य की सारी कानून व्यवस्था ठप्प हो चुकी थी और रज़ाकारों को खुलकर खेलने का मौका मिल गया था। इनकी खिलाफ़त करने के लिए आर्यसमाज के अलावा स्वामी रामानन्द तीर्थ के कुशल नेतृत्व में काँग्रेस, आन्ध्र महासभा, हिन्दू महासभा, समाजवादी व साम्यवादी दल, वकीलों का संगठन, दलितों का संगठन आदि सभी कार्यरत थे। सरदार पटेल का कहना था कि कोई भी कार्रवाई करने से पहले निज़ामशाही के खिलाफ पुख्ता सबूत केन्द्र सरकार के पास होने ज़रूरी हैं। पं. विनायकराव विद्यालङ्कार प्लीडर्स प्रोटेस्ट कमेटी के अध्यक्ष थे। उन्होंने वकीलों के ग्रुप बनाकर उन्हें राज्य के सोलह जिलों में भेजा। इन लोगों ने सरकारी लोगों से छिपकर, अपनी जान पर खेलकर, रज़ाकारों द्वारा हिन्दुओं पर किए ज़ुल्म, दंगे, आगज़नी, महिलाओं, बच्चों पर अत्याचारों की, जान-माल की हानि आदि की विस्तृत रिपोर्टें फोटो सहित तैयार कर कमेटी को सौंप दीं। केन्द्र सरकार की ओर से श्री के. एम. मुन्शी एजेन्ट नियुक्त थे। विनायकराव जी अपनी जान जोखिम में डालकर कमेटी की संकलित रिपोर्ट, निज़ाम का बाहरी ताकतों से पत्र व्यवहार आदि सभी ज़रूरी कागज़ों के साथ रातोंरात अपनी मोटर से हैदराबाद से बोलारम जाकर मुंशी जी को सौंप आए। इस प्रकार पुलिस ऐक्शन का रास्ता साफ़ हुआ।

बाद में केन्द्र सरकार ने हैदराबाद राज्य पर जो श्वेतपत्रिका ज़ारी की उसका बड़ा भाग इसी रिपोर्ट के आधार पर बना। ९ सितम्बर को केन्द्रीय मंत्रिमण्डल ने पुलिस ऐक्शन का निर्णय लिया। निज़ाम सरकार के राज्य में अमन शान्ति के दावे को झुठलाते हुए विनायकराव जी ने अपनी रिपोर्ट के मुद्दे प्रकाशित किये। ११ सितम्बर को उन्हें गिरफ्तार किया गया। १३ सितम्बर को ऑपरेशन पोलो के नाम से प्रत्यक्ष कार्रवाई शुरु हुई, पाँचवें दिन निज़ाम के लायकअली मंत्रिमंडल ने शरणागति, इस्तीफ़ा, युद्धबंदी और रज़ाकारों पर पाबन्दी की घोषणा की और इसी के साथ हैदराबाद स्वतन्त्रता का यह अग्निकुण्ड शान्त हुआ।

इस संग्राम के सभी जाने-अनजाने, नामचीन व अनाम शहीदों को मेरा सादर नमन!!!

**विशाल सोसाइटी, विद्यानिधि मार्ग, जेवीपीडी स्कीम, जुहू, मुम्बई।**

## ईश्वर अवतार नहीं लेता

जो ईश्वर अवतार शरीर धारण किये बिना जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय करता है उसके सामने कंस, रावणादि राक्षस एक कीड़ी के समान भी नहीं। वह सर्वशक्तिमान्, सर्वव्यापक होने से उन कंस, रावणादि राक्षसों के शरीर में भी परिपूर्ण हो रहा है, जब चाहे उसी समय मर्मच्छेदन कर नाश कर सकता है।

भक्तजनों के उद्धार करने के लिए भी वह अवतार नहीं लेता क्योंकि जो भक्तजन ईश्वर की आज्ञानुकूल चलते हैं उनके उद्धार करने का पूरा सामर्थ्य ईश्वर में है। पृथिवी, सूर्यादि, जगत् की उत्पत्ति, धारण और प्रलय जो ईश्वर के बड़े कर्म हैं उनके सामने रावणादि का वध एक साधारण एवं नगण्य कर्म है।

परमात्मा के अनन्त सर्वव्यापक होने से उसका आना जाना कभी सिद्ध नहीं हो सकता। जाना वा आना वहाँ हो सकता है जहाँ न हो। क्या परमेश्वर वह गर्भ में व्यापक नहीं था जो कहीं से आया? और बाहर नहीं था जो भीतर से निकला? इसलिए परमेश्वर का आना-जाना, जन्म-मरण कभी सिद्ध नहीं हो सकता। राग, द्वेष, क्षुधा, तृषा, भय, शोक, दुःख, सुख, जन्म, मरण आदि गुण मनुष्य के हैं, ईश्वर के नहीं।

**( स.प्र.स. ७ )**

# निर्वाचन से चयन की ओर

**अमृत मुनि**

महर्षि दयानन्द सरस्वती तथा उनके अनुयायियों द्वारा स्थापित विभिन्न संस्थाओं के कार्यों हेतु दो प्रकार से पदाधिकारी एवं अन्तरंग सदस्यों सहित कार्यकारिणी का गठन किया जाता है।

**( अ ) चयन प्रक्रिया**- आर्यसमाजों के क्रियाकलापों के संचालन हेतु कार्यकारिणी का गठन सामान्यतया निम्न प्रकार से किया जाता है।

**( १ )** साप्ताहिक सत्संगों में न्यूनतम २५ प्रतिशत उपस्थिति तथा वार्षिक चन्दे को जमा करने की शर्त के अधीन आर्य सभासद् घोषित किये जाते हैं। विशेष योग्यता/बाह्य प्रचार आदि के कारण कतिपय विशिष्ट सदस्यों को विशेष छूट (उपस्थिति में) देकर भी आर्य सभासद् घोषित कियाा जाता है।

**( २ )** घोषित आर्य सभासद् ही कार्यकारिणी की चयन प्रक्रिया में सम्मिलित होते हैं।

**( ३ )** कार्यकारिणी के गठन हेतु आहूत साधारण सभा की बैठक में गत वर्ष की कार्यवाही रिपोर्ट मन्त्री द्वारा तथा लेखा-जोखा (आय-व्यय विवरण) कोषाध्यक्ष द्वारा पढ़े एवं पारित हो जाने के बाद आगामी कार्यकारिणी के गठन हेतु पद वार प्रस्ताव आमन्त्रित किये जाते हैं।

**( ४ )** सर्वप्रथम प्रधान पद हेतु प्रस्ताव आमन्त्रित किये जाने पर आर्य सभासद्गण (स्वयं को छोड़कर) अन्यों हेतु प्रस्ताव करते हैं तथा प्रस्ताव का समर्थन किसी अन्य आर्य सभासद् द्वारा भी किये जाने पर प्रस्ताव का अंकन कार्यवाही पंजिका में किया जाता है। एक से अधिक व्यक्तियों के प्रस्ताव प्रधान पद पर आने की दशा में प्राय: एक व्यक्ति के समर्थन में अन्य प्रस्तावित व्यक्ति अपना नाम वापस ले लेते हैं तथा इस प्रकार सर्वसम्मति से प्रधान पद का तथा तत्पश्चात् अन्य पदों पर भी इसी प्रकार चयन हो जाता है।

**( ५ )** एक से अधिक व्यक्तियों के प्रस्ताव एक पद हेतु आने तथा कभी-कभी अन्य व्यक्तियों द्वारा एक व्यक्ति के पक्ष में अपने नाम वापस न किये जाने की दशा में एक-एक प्रस्तावित व्यक्ति के पक्ष में आर्य सभासदों के हाथ उठवाये जाते हैं तथा जिसके पक्ष में अधिक लोग होते हैं उसका उक्त पद पर चयन बहुमत के आधार पर किया जाता है।

**( ६ )** इस पूरी प्रक्रिया में १ से २ घण्टे का समय लगता है तथा कोई भी व्यक्ति स्वयं न तो चुनाव में नॉमिनेशन फाइल करता है, न चुनाव प्रचार करता है तथा बिना किसी मनोमालिन्य के एक वर्ष की कार्यकारिणी एवं पदाधिकारियों का चयन योग्यता/कर्मठता आदि के आधार पर समाज-हित में अन्य सभासदों के मूल्यांकन एवं प्रस्ताव/समर्थन के अनुसार किया जाता है।

**( ब ) निर्वाचन प्रक्रिया**- इस प्रक्रिया में एक निर्वाचन अधिकारी की नियुक्ति करते हुये विभिन्न पदों पर नामांकन आमन्त्रित किये जाते हैं, जिनमें सभासद् स्वयं को पद विशेष हेतु योग्य मानते हुये अपना नामांकन निर्धारित नामांकन फॉर्म क्रय करके निर्वाचन अधिकारी के समक्ष प्रस्तुत करता है। इस हेतु निर्वाचन अधिकारी एक समयावधि घोषित करता है जिसमें नामांकन अवधि एक निश्चित तिथि से एक निश्चित तिथि तक (यथा ०१-०१-से १०-०१ तक) नामांकन पत्रों की जाँच, नाम वापसी की अवधि एवं नाम वापसी के उपरान्त एक से अधिक प्रत्याशी एक पद हेतु होने पर निर्वाचन तिथि को सभी सदस्यों का गुप्त मतदान, इस हेतु मतपत्र छपवाकर किया जाता है। तथा मतदान के उपरान्त सर्वाधिक मत पाने वाले व्यक्ति को निर्वाचित घोषित किया जाता है। इस प्रक्रिया में विभिन्न महत्त्वपूर्ण घटनाक्रम निम्नवत होते हैं-

(१) व्यक्ति स्वयं को योग्यतम मानते हुये निर्वाचन हेतु नामांकन-प्रपत्र दाखिल करता है जिसे इलेक्शन में खड़ा होना भी कहा जाता है। स्वाभाविक है कि इसमें लोकैषणा, वित्तैषणा तथा पुत्रैषणा की ग्रस्तता का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रोल स्वयं को योग्यतम समझकर चुनाव में अपनी प्रत्याशिता घोषित किये जाने में होती है।

(२) एक पद हेतु एक से अधिक प्रत्याशी होना अत्यन्त स्वाभाविक होता है क्योंकि यह प्रत्याशिता निष्पक्ष रूप से अन्य व्यक्तियों द्वारा योग्यता के आधार पर नहीं होती अपितु एक व्यक्ति के अहंकार, स्वार्थपरता, पद के दुरुपयोग आदि

से आर्थिक, सामाजिक एवं पारिवारिक/वैयक्तिक लाभ प्राप्त करने की प्रत्याशा में नामांकन दाखिल किया जाता है।

(३)विभिन्न एषणाओं से ग्रस्त व्यक्तियों द्वारा नामांकन भरने पर अन्य प्रत्याशियों के विरुद्ध अनेकशः दोषारोपण, मिथ्या अनर्गल अरोपों/दुष्प्रचार हेतु सभी प्रत्याशी नामांकन तिथि से लेकर निर्वाचन तिथि तक लगातार महीनों तक समस्त मतदाताओं से बारी-बारी अनेक चक्रों में व्यक्तिशः, समूह बनाकर सम्पर्क करके संस्था का पूरा वातावरण खराब करते हैं। राजनीति की भाँति "Politics is the last refuge of scoundrels" की भाषा में अनेक बदमाशों में से सबसे कम बदमाश के निर्वाचन का ही विकल्प मतदाता के पास छोड़ते हैं।

(४) इस हेतु जातिवाद, क्षेत्रवाद, भाई-भतीजावाद, गुटवाद आदि समस्त नकारात्मक शक्तियों का बोलबाला हो जाता है तथा कई बार इनके आधार पर तथा बाहुबल/धनबल के आधार पर सबसे कम बदमाश के स्थान पर सबसे अधिक बदमाश निर्वाचित हो जाता है तथा संस्था का सत्यानाश हो जाता है।

(५) वोट खरीदने की प्रक्रिया में यहाँ तक स्थिति आती है कि जो सदस्य पूरे वर्ष भर न तो संस्था की सामान्य गतिविधियों/सत्संगों में सम्मिलित हुआ, न ही वार्षिक/मासिक शुल्क/चन्दा जमा किया, उसका चन्दा आदि प्रत्याशी जमा करके किराया-भाड़ा आने-जाने का देकर केवल वोट देने हेतु उसे बुलाते हैं। इस प्रकार वोट खरीदकर जीतने वाला उस मूल्य की भरपाई करने में अनुचित रूप से संस्था की बोली लगाते हैं।

यह स्थिति अत्यन्त भयावह है तथा मतदान द्वारा निर्वाचन कराये जाने वाली संस्थायें आध्यात्मिक/सामाजिक उन्नति के स्थान पर अधोगति को प्राप्त हो रही हैं। संस्थाओं को इस अधोगति से उबारने का दायित्व सभी सदस्यों के ऊपर ही है तथा यदि सामूहिक संकल्प-शक्ति हो तो वे निम्नलिखित प्रक्रिया अपनाकर संस्था को गर्त में जाने से बचा सकते हैं-

**( स ) संस्था को बचाने हेतु विकल्प**- आध्यात्मिक/सामाजिक संस्थाओं को राजनीति की दुर्गन्ध/कीचड़ से बचाने हेतु निम्न प्रक्रिया अपनाई जा सकती है-

**( १ )** साप्ताहिक/दैनिक सत्संगों में सदस्यों की उपस्थिति-पंजिका रखकर उनमें हस्ताक्षर कराये जायें तथा २५ प्रतिशत उपस्थिति के बिना वोट देने का अधिकार न दिया जाय क्योंकि जो व्यक्ति संस्था की सामान्य गतिविधियों में सम्मिलित हीं नहीं हुआ उसे क्या पता कि कौन कैसा है?

**( २ )** राजनीतिक निर्वाचन की तरह नामांकन प्रक्रिया से मतदान की लम्बी निर्वाचन अवधि के स्थान पर मात्र एक दिन १ से २ घण्टे में अन्य व्यक्तियों द्वारा सर्वाधिक उपयुक्त/योग्यतम व्यक्ति के पक्ष में प्रस्ताव समर्थन के आधार पर चयन किया जाय।

**( ३ )** चयन हेतु संस्था के कुल सदस्यों के मध्य से संस्था के कार्य संचालन हेतु आवश्यक न्यूनतम व्यक्तियों को संस्था के पूरे क्षेत्र, गली, मोहल्ले में से एक निश्चित संख्या में प्रतिनिधियों का चयन अन्यों द्वारा प्रस्तुत प्रस्ताव के आधार पर करके, इस प्रकार चयनित प्रतिनिधियों में से पुनः प्रस्ताव के आधार पर प्रधान तथा/अथवा अन्य पदाधिकारियों/अन्तरंग सदस्यों का चयन किया जाय जिससे यह पूरी प्रक्रिया महीनों न चलकर मात्र एक दिवस में भी मात्र एक-दो घण्टे में ही बिना किसी दुष्प्रचार/मिथ्या दोषारोपण, गुटबाजी/जातिगत कलुष आदि के सम्पन्न हो जाय।

**( ४ )** पदाधिकारियों/अन्तरंग सदस्यों की उक्तानुसार निर्धारित न्यूनतम संख्या से कुल सदस्यों की संख्या को भाग देने पर कितने सदस्यों पर एक अन्तरंग सदस्य चयनित होना है, निकल आयेगा तथा संस्था में हर क्षेत्र/गली में से एक तरफ से उक्त संख्या के सदस्यों को अपना प्रतिनिधि चयन करने का अधिकार दिया जाय तथा कुल सदस्यों के चयन के पश्चात् इन चयनित सदस्यों को अपने में से योग्यतम को प्रधान चुनने एवं इस प्रकार चयनित प्रधान को शेष चयनित सदस्यों में से विभिन्न पदाधिकारियों के चयन का अधिकार दिया जा सकता है।

**( ५ )** निवर्तमान प्रधान की अध्यक्षता में समस्त पूर्व प्रधानों का मार्गदर्शक मण्डल बनाया जा सकता है। समस्त आर्यजनों का परम पुनीत कर्त्तव्य है कि हम आर्य संस्थाओं को राजनीति/गुटबाजी/जातिवाद/क्षेत्रवाद/लोकैषणा/पुत्रैषणा/वित्तैषणा से मुक्त कराकर आध्यात्मिक/सामाजिक उन्नति करते हुये आत्मदर्शन/परमात्म-दर्शन के उद्देश्य को प्राप्त करने हेतु दृढ़ संकल्पित हों।

**ज्वालापुर हरिद्वार**

# वर्तमान परिपेक्ष में वेदप्रचार कार्य में नव योजना की आवश्यकता

सुनिती छेत्री

**वर्तमान में आर्यसमाज की परम आवश्यकता**

पराधीन भारत की तुलना में वर्तमान परिस्थितियाँ सर्वथा भिन्न हैं, तथापि वर्तमान में भी अल्पशिक्षित, उच्च शिक्षित और विपन्न से अति सम्पन्न जन भी वेदज्ञान के अभाव में अन्धविश्वास, अन्धपरम्पराओं से त्रस्त हैं। धर्म, आस्था, ईश्वर के नाम पर लाखों लोग गुरुडम-स्वयंभू भगवान् के भ्रमजाल में फँसे हैं। सनातन धर्म विषयक गलत अवधारणाओं द्वारा इसे घृणित, भ्रमित और कलुषित करने का कार्य हो रहा है। दिन-प्रतिदिन सैकड़ों सनातनी सेमेटिक (ईसाई) मत की सुनामी से प्रभावित हो रहे हैं। इस परिस्थिति में देश में अपने ही घर के अन्दर परिवार को सुरक्षित रखना परम आवश्यक है।

**आर्यसमाज के वर्तमान कार्य**

**१.** भारत में कुछ आर्य संगठनों को छोड़ अन्य शिथिल, निष्क्रिय प्रायः हैं तो कुछ केवल विवाह संस्कार केन्द्र के नाम से प्रसिद्ध हैं।

**२.** आर्यसमाज में प्रचार-योजना ही नहीं है। वार्षिक कार्यक्रम में आयोजक द्वारा तन-मन-धन अर्पणकर श्रद्धापूर्वक कार्यक्रम की औपचारिकता पूर्ण की जाती है लेकिन ऐसे कार्यक्रम में नये श्रद्धालु जिज्ञासु लोगों से कार्यक्रम के दौरान या कार्यक्रम पश्चात् सम्पर्क तक भी नहीं किया जाता है। अर्थात् उत्सव-कार्यक्रम के पश्चात् प्रचार निष्क्रिय रहता है।

**३.** प्रायः आर्यसमाजों में उपदेशक/पुरोहित ही नहीं हैं जबकि उपदेशक प्रचार के केन्द्र बिन्दु होते हैं। जिन आर्यसमाजों में पुरोहित नियुक्त हैं वे यज्ञ-विवाह आदि में सीमित रहते हैं। प्रचार बोध के अभाव में अपने साथ रहने वाले सेवक, दरबान तक को भी वेद विषयक मूलभूत ज्ञान भी नहीं देते हैं। समय-समय पर 'शुद्धि पत्रिका' में निरन्तर प्रयास द्वारा सैकड़ों जन की घर वापसी का समाचार पढ़कर नव आशा एवं ऊर्जा अवश्य मिलती है।

**४.** कहीं-कहीं प्रचारक अपने आस-पास में वैदिक विचार के सदस्यों के बीच में प्रचार से सन्तुष्ट रहते हैं जबकि बाहर की परिस्थिति एकदम भिन्न है। अन्धेरे में दीपक प्रकाशित करना अधिक महत्त्वपूर्ण एवं आवश्यक है। प्रचार में शिथिलता के कारण कुछ वेद अनुरागी विद्वज्जन देश में नये-नये अस्पताल निर्माण कर प्रचार को सक्रियता प्रदान करने का सुझाव देते हैं लेकिन जब तक मुख्य उद्देश्य अर्थात् वेद प्रसार-प्रचार कार्य में अपनी शक्ति को केन्द्रित न करें तब तक प्रचार नहीं हो पाएगा।

अतः एक सभ्य-भारत की सामाजिक, आध्यात्मिक, राजनैतिक क्रान्ति का सूत्रपात एवं नेतृत्व करने वाला विश्व में बहुचर्चित सजग संगठन (आर्यसमाज) आज कार्य शिथिलता के कारण अपना परिचय तक जन-जन को नहीं दे पा रहा है। आर्यसमाज कोई मत सम्प्रदाय नहीं, यह तो दानव को मानव, मानव को देवता बनानेवाला संगठन है। यह वह संगठन है जिसके स्वामी श्रद्धानन्द ने जामा मस्जिद दिल्ली में ऐतिहासिक वेद प्रवचन दिया है।

**आर्यसमाज के शताब्दी समारोह में प्रेरक विचार**

सन् १९७५ में शताब्दी समारोह के पावन अवसर पर सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली द्वारा प्रकाशित सार्वदेशिक पत्रिका के विशेषांक में वरिष्ठ विद्वान् पं. युधिष्ठिर जी मीमांसक ने अपने लेख में आर्यसमाज द्वारा वेद प्रचार कार्य को सक्रियता एवं व्यापकता प्रदान करने हेतु कुछ इस प्रकार के विचार प्रकट किये थे-

वर्तमान में शिक्षा सरकारी योजना अन्तर्गत है अतः हमें अपनी शक्ति आर्य विद्यालयों की स्थापना में केन्द्रित न कर अनेकों सुयोग्य उपदेशक तैयार करने चाहिएँ। भारत के प्रत्येक जिले में एक प्रमुख उपदेशक रखें जाएँ। उन्हें एक सरकारी S.D.O. की तरह सम्मान, सुविधा प्रदान करें। उनके यह विचार मनन योग्य एवं अनुकरणीय हैं।

इस पुनीत अवसर पर तत्कालीन सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के महामन्त्री श्री ओमप्रकाश त्यागी ने भारत के प्रत्येक आर्यसमाज में उपदेशक नियुक्त करने का संकल्प किया जो क्रियान्वित नहीं हो सका।

**अनुकरणीय प्रचार शैली**

अपनी दूरदर्शी सुनियोजित प्रचार योजना अनुरूप सेमेटिक (ईसाई) उपदेशक एवं प्रत्येक सदस्य समर्पित प्रचारक बनकर निरन्तर प्रयत्नशील रहते हैं, उनकी पारिवारिक एवं पेशागत व्यस्तता प्रचार कार्य में बाधक नहीं होती अपितु हर परिस्थिति में प्रचार करते हैं। प्रचार कार्य में व्यापकता हेतु वे घर-घर में वैतनिक एवं अवैतनिक प्रचारक तैयार कर रहे हैं। देश-काल-परिस्थिति अनुरूप नवीनतम प्रभावशाली योजना से अवगत एवं प्रशिक्षित करने के लिये नियमित कार्यशाला आयोजित करते हैं।

सनातनजनों से निरन्तर सम्पर्क में रहकर जब वे उन्हें अपना अनुयायी बनाते हैं तो नये सदस्य पूर्णरूप से समर्पित सदस्य एवं प्रचारक बन जाते हैं जो अपने ही भारतीय संस्कार-संस्कृति, राष्ट्रप्रेम, राष्ट्रभाषा, मातृभाषा के प्रति उदासीन दृष्टिकोण रखने लगते हैं और पाश्चात्य सभ्यता में झुक जाते हैं, यह अति दु:खद, दुर्भाग्यपूर्ण एवं चिन्ताजनक स्थिति है।

प्राय: हम सबने यही गलत धारणा रखी हुई है कि उनका प्रचार कोष विदेशों से आता है लेकिन इसके साथ-साथ प्रत्येक परिवार के सभी पेशागत सदस्य प्रति माह अपनी-अपनी आय के दशांश/शतांश ईमानदारी से प्रचारार्थ अर्पण करते हैं। प्रत्येक सदस्य एवं उनके परिवार को साप्ताहिक सत्संग में अनिवार्य रूप से उपस्थित होना पड़ता है।

उपदेशकों में त्याग, सहानुभूति, अंहकार-शून्यता, सेवाभाव, जनसम्पर्क कौशल, आत्मीयता आदि मूलभूत गुण कूट-कूटकर भरा पाया जाता है। लोगों से इस प्रकार से व्यवहार करते हैं मानो लोगों को उनकी नहीं, उपदेशक को लोगों की आवश्यकता है। वे अपनी विद्वत्ता प्रकट नहीं करते, छोटे होकर प्रचार करते हैं।

पहाड़ों में जिन क्षेत्रों में यातायात का साधन नहीं है, वहाँ पर उनके प्रचारक दस-पन्द्रह किलोग्राम वजन का सामान पीठ पर उठाकर पैदल प्रचार करते हैं। उनके सम्पन्न विद्यालयों द्वारा प्रचारार्थ आर्थिक सहयोग दिया जाता है एवं प्रत्येक विद्यार्थी से एक-दो हजार रुपया प्रतिवर्ष ही सेवा के नाम पर बुद्धिमत्ता-पूर्वक संग्रह करते हैं, विद्यालय अवकाश के समय आकर्षक विद्यार्थी शिविर का आयोजन कर सेवा के नाम पर संग्रहीत लाखों रुपयों को प्रचार कार्य में खर्च करते हैं।

अपने विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के बाल-मस्तिष्क को निरन्तर अपने मत के प्रचार द्वारा इस प्रकार प्रभावित करते हैं कि वे जीवनपर्यन्त सेमेटिक (ईसाइयत) के प्रशंसक-पक्षधर-संरक्षक बन जाते हैं।

अत: हमें वेद प्रचार कार्य में सफलता प्राप्त करने के लिए अंग्रेजों की दूरदर्शी, पारगंत प्रचार शैली से प्रेरणा लेनी ही चाहिए।

महात्मा नारायण स्वामी जी कहते हैं कि आर्यसमाज के प्रचार युग में प्रत्येक आर्य सदस्य में प्रचार की तड़प रहती थी। प्रतिदिन किसी नये व्यक्ति को वेदज्ञान परिचय परम धर्म मानकर देते थे।

आज यह प्रचार की तड़प एवं सक्रिय प्रचार कार्यशैली ईसाइयों में है। जिस प्रकार विगत में समर्पित आर्यजनों ने अल्प समय में भारत के कोने-कोने में आर्यसमाज स्थापित किया था उसी तरह वे भी अपने पूजा केन्द्र स्थापित कर रहे हैं। देश के कई छोटे बड़े गाँव/शहरों में पूजा केन्द्र निर्माण कार्य में निरन्तर सफल हो रहे हैं।

वर्तमान में इन्होंने भजनों को अति आकर्षक स्थानीय-पाश्चात्य-आधुनिक भारतीय संगीत में तैयार किया है, जो सहजता से छोटे-बड़े, युवा, बुजुर्ग के हृदय को प्रभावित कर लेते हैं। प्रत्येक सदस्य को प्रभावशाली प्रार्थना वाचक बनाते हैं।

**निरन्तर प्रभावशाली प्रचार द्वारा सफलता अवश्य मिलेगी**

जम्मू-कश्मीर के तत्कालीन प्रधानमन्त्री श्री मेहरचन्द जी महाजन (स्वतन्त्र भारत के प्रमुख न्यायाधीश) ने तत्कालीन महाराज हरिसिंह (डॉ. कर्णसिंह के पिता) को अमेरिका हवाई यात्रा के दौरान प्रभावशाली वार्तालाप द्वारा कट्टर पौराणिक परम्परावादी राजघराने के महाराजा को आर्यसमाजी बनाया। महाराजा ने अपने वसीयतनामे में अपना अन्त्येष्टि संस्कार विशुद्ध वैदिक विधि अनुसार करवाने को लिखा एवं अस्थि को गंगा में बहाने की परम्परा के विरुद्ध खेतों में बिखरने के लिये लिखा, जो वैदिक परम्परा ही है। उन्होंने उस समय ३.५ करोड़ रुपयों की

धनराशि आर्यसमाज को दी, जिसका डी.ए.वी. निर्माण में सदुपयोग किया गया। यह वर्णन महात्मा आनन्द स्वामी की पुस्तक में मिलता है।

पाकिस्तान के तत्कालीन प्रधानमन्त्री जुल्फिकार अली भुट्टो के कार्यकाल में विदेशमन्त्री रह चुके आगा शाही थे, उन्हीं के पिता श्री ज्ञानेन्द्र देव सूफी (मौलाना हाजी मौलवी अब्दुल रहमान) कट्टर मुसलमान थे। श्री ज्ञानेन्द्र सूफी पं. कालीचरण के साथ शास्त्रार्थ में हारकर शर्त अनुसार समर्पित आर्यसमाजी बन गये थे।

सन् १९०४ में ईसाई मत प्रचार के लिये भारत भेजे गए समर्पित प्रचारक अंग्रेज पादरी Samuel Stock एवं उनकी धर्मपत्नी के निवास पर एक रात भ्रमणकारी आर्य संन्यासी को ठहरना पड़ा। संन्यासी के सन्ध्या आदि नित्यकर्म से जिज्ञासु बनकर पादरी की पत्नी ने जानना चाहा तो आर्य सन्त ने वैदिक सिद्धान्त के मूलभूत ज्ञान को समझाया तो पादरी परिवार ने प्रभावित होकर एक दिन और ठहरने का आग्रह किया और वैदिक धर्म विषय की जानकारी ली। इस प्रकार ३-४ दिन आर्य संन्यासी को अपने निवास में ठहराकर वैदिक धर्म से पूर्णरूप से प्रभावित होकर वो आर्यसमाजी बन गए। Samuel Stock से शिवानन्द स्टॉक बन गए। हिमाचल प्रदेश में स्थायी रूप से अपना निवास स्थान बनवाया। स्वतन्त्रता संग्राम में उन्होंने अंग्रेजों की बेगार-प्रथा के विरुद्ध अंग्रेज शासकों से संघर्ष किया। उनके सुपुत्र प्रेमचन्द्र इंजीनियर थे, उन्हीं की सन्तान श्रीमती विद्या स्टॉक हैं जो हिमाचल प्रदेश की काँग्रेस अध्यक्षा थीं। लेकिन दुर्भाग्यवश आज हम उनके परिवार के साथ सम्पर्क में ही नहीं हैं।

**अति सम्पन्न एवं समर्थ आर्यसमाज**

आर्यजगत् में वेदज्ञान रूपी साहित्य का बृहत् भण्डार है, जो अन्य किसी मत-सम्प्रदाय संगठनों में है ही नहीं। लेकिन वर्तमान में वेदज्ञान प्रसाद अपने ही लोगों बीच वितरित हो रहा है। हमारे संगठन में उच्चस्तरीय वैदिक प्रवक्ता, सन्तजन, वानप्रस्थी, संन्यासीजन, साहित्यविद् हैं। मानव प्रकृति अनुकूल ईश्वर स्तुति-प्रार्थना-उपासना मार्ग जो वेद में है ऐसा किसी तथाकथित धर्म में नहीं मिलता है।

**भजन** जन-जन में प्रभावशाली प्रचार का एक अति सशक्त माध्यम है। विविध मत-सम्प्रदाय एक-दो पंक्तियों का सुमधुर गायन एवं संगीत को घण्टों प्रसारित कर किस प्रकार जनसैलाब को प्रभावित करते हैं यह हम सभी ने देखा है। वैदिक भजन संग्रह अति श्रेष्ठ एवं प्रेरक है। आवश्यकता है उसे हृदयग्राही संगीत एवं गायन द्वारा ध्वनीकरण करने की। लेकिन चलचित्रों के संगीत का अनुकरण न हो। ख्याति प्राप्त संगीतकार-गायक-गायिका को सम्मिलित करें।

**नव प्रचार योजना निर्माण**

कार्य की सफलता पूर्व-नियोजित दूरदर्शी योजना पर आधारित होती है। हम वर्तमान उपदेशक विद्यालयों को अधिक प्रभावशाली बना सकते हैं। हजारों उपदेशकों की आवश्यकता है। युगीन आवश्यकता अनुरूप नये-नये उपदेशक विद्यालयों का निर्माण हो।

उपदेशकों में निर्धारित पाठ्यक्रम के साथ-साथ कुछ इस प्रकार की मूलभूत योग्यताओं को विकसित कर उन्हें एक आदर्श की तरह तैयार कर सकते हैं।

वक्तृत्वकला विकास, स्वाध्यायशीलता, जन-सम्पर्क कौशलता, आधुनिक ज्ञान-विज्ञान में रुचि।

अपने कार्य को पेशागत न समझकर ईश्वरीय कार्य समझकर त्याग-समर्पण भाव से कार्य में रुचि रखने वाला हो।

**योग शिक्षा, प्राकृतिक चिकित्सा ज्ञान**

उपदेशक की सरल-स्वच्छ सात्त्विक आकर्षक वेशभूषा हो

न्यूनतम आठवीं-दसवीं या बारहवीं कक्षा पढ़े। सदाचारी विद्यार्थी को उपदेशक तैयार कर सकते हैं। वर्तमान पीढ़ी को प्रभावित करने के लिए उपदेशक को अंग्रेजी का प्रायोगिक ज्ञान भी प्रदान करना चाहिए।

उपदेशक को उनकी योग्यता, कार्य अनुकूल वेतन व्यवस्था हो ताकि वे आर्थिक रूप से निश्चिन्त रहकर अपनी शक्ति को केवल और केवल प्रचार में केन्द्रित कर सकें। उपदेश कार्य रोजगार का साधन बन सके। ऐसा प्रयास करना चाहिये।

वानप्रस्थी/संन्यासी जन के लिए जगह-जगह आवसीय व्यवस्था, प्रचारार्थ सुविधा/सहूलियत प्रदान करना आवश्यक

है।

प्रत्येक सदस्य में प्रचारक की भावना का बीजारोपण करें।

प्रचार कार्य का नियमित रूप से मूल्यांकन एवं समीक्षा हेतु कार्यशाला आयोजित हो।

**वेद प्रचार कोश गठन**

योजना को क्रियान्वित करने के लिये धन की परम आवश्यकता होती है। सर्वप्रथम दूरदर्शी, त्यागी विद्वज्जन, राजनीति से अलग रहने वाले संन्यासी, वानप्रस्थी जन द्वारा एक केन्द्रीय समिति का गठन हो जिसमें राज्यस्तरीय उपसमिति द्वारा प्रत्येक सदस्य को सम्मिलित करना होगा।

सत्य ज्ञान ही धर्म है, जो हमें वेदों में मिलता है। जिसे सभी नास्तिक-आस्तिक मानते, पालन करते हैं। वेदों में तुम्हारा-मेरा, छोटा-बड़ा का विवाद ही नहीं है। ईश्वर के नाम पर, धर्म-आस्था के नाम पर विविध मतों द्वारा निर्मित मत-सम्प्रदाय अपने अनुयायी मात्र के हितकारी होते हैं, लेकिन वेद किसी मत, सम्प्रदाय, जाति, देश की धर्म-पुस्तक नहीं हैं। वेद तो शाश्वत, सर्वहितकारी, पक्षपातरहित, विज्ञानसम्मत ईश्वरीय ज्ञान है। वैदिक साहित्य में वर्णित धर्म के दस लक्षणों को सभी मत-सम्प्रदाय व नास्तिक भी मानते है।

ऐसी मानव कल्याण योजना के लिए दानदाताओं द्वारा यथेष्ट सहयोग मिलेगा ही। सेमेटिक (ईसाई) सम्प्रदाय में अरबों रुपयों का प्रचार कोश है। उन्हें सरकार द्वारा भी विविध अनुदान निरन्तर मिलता रहता है, लेकिन आर्यसमाजों को तो सरकार द्वारा वा अन्य कहीं से अपार दानराशि मिलती नहीं है। प्रत्येक सदस्य को यथाशक्ति योगदान देना चाहिए। आर्य संगठनों-विद्यालयों द्वारा भी प्रचारार्थ धनराशि प्रदान करने में प्राथमिकता देनी चाहिए।

**वेद प्रचार कोश में अरबों रुपये धन की आवश्यकता**- इस कोश का केवल वार्षिक ब्याज मात्र निम्न प्रचार कार्य में सदुपयोग हो ताकि दीर्घकाल तक प्रचार कार्य को निरन्तरता प्रदान कर सकें-

**१. उपदेशक को वेतन**

**२. लघु वैदिक साहित्य प्रकाशन-वितरण** विविध भाषाओं में वेदों के मौलिक सिद्धान्त विषयक सरल-सुबोध लेख। (Leaflet, Pamphlet, Booklet) निरन्तर प्रकाशित करें ताकि लोगों में वेद के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न कर सकें।

प्रभावशाली उपदेशक हर क्षेत्र में हों तो वे सहजता से प्रभावित कर पुण्यकार्य के लिए अनेक लोगों को तन-मन द्वारा सहयोग करने के लिये प्रेरित करेंगे।

वर्तमान के प्रशिक्षित उपदेशक, पण्डित, जो वर्षों इस मिशन में हैं व्यक्तिगत रूप से प्रचार में लगे हैं, उन्हें भी इस योजना में जोड़ना चाहिए। समय-समय पर कार्यशाला आयोजित कर प्रचार कार्य में एकरूपता प्रदान करें।

(उपर्युक्त योजना का सुझाव आर्यसमाज दार्जिलिंग, प. बं. के प्रधान ८८ वर्षीय श्री भीम कुमार छेत्री का है।)

## स्तुति, प्रार्थना, उपासना

ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना, उपासना से मनुष्य के पाप नहीं छूटते। इनका फल कुछ अन्य ही है-स्तुति से ईश्वर में प्रीति, उसके गुण, कर्म, स्वभाव से अपने गुण, कर्म, स्वभाव का सुधारना, प्रार्थना से निरभिमानता, उत्साह और सहाय का मिलना, उपासना से परब्रह्म से मेल और उसका साक्षात्कार होना। जो केवल भांड के समान परमेश्वर के गुण कीर्तन करता जाता और अपने चरित्र नहीं सुधारता उसका स्तुति करना व्यर्थ है। जिस-जिस दोष वा दुर्गुण को छोड़ने व सद्गुण को प्राप्त करने की परमात्मा से प्रार्थना करे, उस उसके लिए अपने से जितना हो सके प्रयत्न करे अर्थात् अपने पुरुषार्थ के उपरान्त प्रार्थना करनी योग्य है क्योंकि जो परमेश्वर की पुरुषार्थ करने की आज्ञा है उसको जो कोई तोड़ेगा वह सुख कभी न पावेगा।

## सत्य का विजय

सर्वदा सत्य का विजय और असत्य का पराजय और सत्य से ही विद्वानों का मार्ग विस्तृत होता है। इस दृढ़ निश्चय के आलम्बन से आप्त लोग परोपकार करने से उदासीन होकर कभी सत्यार्थ प्रकाश करने से नहीं हटते। (स. प्र.)

# शङ्का समाधान - ४८

**डॉ. वेदपाल**

**शङ्का**- क्या भगवान् हमारे पापों का नाश कर सकता है? अगर हाँ, तो हम दु:खी क्यों हैं?

**कपिल-टोंक ( राज. )**

**समाधान**- आपकी शङ्का के समाधान के लिए दो शब्दों 'पाप' एवं 'दु:ख' को सम्यक् प्रकार से जानना/समझना आवश्यक है। **पाप शब्द 'पा रक्षणे' ( अदादि. ) धातु से 'पानीविषिभ्य: प:' ( उणादि. ३.२३ ) औणादिक 'प' प्रत्यय होकर निष्पन्न हुआ है। महर्षि दयानन्द उणादि सूत्र की व्याख्या में- 'पान्ति रक्षन्त्यात्मानमस्मादिति पापमधर्मो वा'**- जिससे अपनी/आत्मा की रक्षा की जाए अथवा जिससे अपनी रक्षा करते हैं, वह पाप अथवा अधर्म है। अर्थात् वह दुर्वृत्त, दुर्व्यसन, दुष्कर्म जो आत्मा का विघातक, उसके पतन-अधोगति का कारण है, वह पाप है। महर्षि ने इन्हें अधर्म कहा है। **आप्टे के अनुसार- 'पाप ( विशेषण ) पाति रक्षति आत्मानम् अस्मात् पा+प. अनिष्टकर, दुष्ट, दुर्वृत्त, विनाशक,- पापम्-बुराई, जुर्म, दुर्व्यसन' ये पाप शब्द के अर्थ हैं** (द्रष्टव्य- आप्टे, संस्कृत हिन्दी कोश पृ. ६०५)।

**'दु:ख'** शब्द **सन्ताप-उपतापार्थक 'टु दु सन्तापे'** (स्वादि.) धातु से निष्पन्न है। **अथवा अनीप्सित, निन्दा, असम्पत्ति, निषेध तथा प्रातिलोम्य आदि अर्थों के वाचक दुर् के साथ 'ख' के संयोग से दु:ख शब्द बनता है। आप्टे के अनुसार-दु:ख ( वि. ) दुष्टानि खानि यस्मिन् खेद, रंज, विषाद, पीड़ा, वेदना का वाचक दु:ख शब्द है।** जीव द्वारा किए गए कर्मों के वे फल जो उसे कष्ट, पीड़ा या विषाद के जनक होने से अनीप्सित हैं वे दु:ख हैं, उन्हें वह प्राप्त करना नहीं चाहता। **जिन कर्मों के ये दु:खरूप फल हैं वे कर्म पाप-अधर्म हैं।**

जीव को आत्मोन्नति के साधक अथवा बाधक कर्मों को करने के लिए कुछ साधन प्राप्त हैं, जिन्हें हम शरीर तथा शरीरान्तर्गत इन्द्रियों के नाम से जानते हैं। दार्शनिक शब्दों में ये करण (अन्त: तथा बाह्य) कहलाते हैं। जीव इन्हीं की सहायता या माध्यम से किसी भी प्रकार के कर्म करने में समर्थ होता है। कर्त्ता ये करण नहीं हैं, अपितु इनके द्वारा कर्मों का सम्पादक चेतन जीव है-

**'कर्त्ता शास्त्रार्थवत्वात्'** (वेदान्त दर्शन २.३.३३)।

जीव मात्र कर्त्ता ही नहीं, अपितु वह स्वतन्त्र कर्त्ता है अर्थात् उसे कर्म करने का पूर्ण स्वातन्त्र्य प्राप्त है। वह किसी कर्म को करने, न करने अथवा अन्यथा करने में पूर्णत: स्वाधीन है। अत: उन कर्मों के फल/परिणाम का प्राप्तकर्त्ता/भोक्ता भी वही है। तद्यथा-

**'कर्तु: फलावगम:'** (सांख्य दर्शन १.१०६)।

जीव के द्वारा किए जाने वाले कर्म- तप-स्वाध्याय और ध्यान करने वालों के शुक्ल=पुण्यमय, विवेक शून्य, दुर्वृत्त, आसुरी वृत्ति प्रधान पुरुषों के कृष्ण=पापमय और साधारणजनों के शुक्ल कृष्ण=पुण्यपापमिश्रित तथा वीतराग योगियों-साधकों एवं निष्कामकर्म करने वालों के अशुक्ल अकृष्ण= पुण्यपापरहित होते हैं। ऐसा मत योग दर्शन का है-

**'कर्माशुक्लाकृष्णं योगिनस्त्रिविधमितरेषाम्'**-

(योग दर्शन ४.७)

इन कर्मों में से शुक्ल कर्मों का फल सुख, कृष्ण का फल दु:ख तथा शुक्ल-कृष्ण के फल सुख-दु:खमिश्रित होते हैं।

जीव द्वारा किए जाने वाले कर्म का फल ईश्वरीय व्यवस्था से जीव को प्राप्त होता है। सांख्य के समान ही वेदान्त दर्शन ३.२.३८ में कहा गया है कि- **'फलमत उपपत्ते:'** परमात्मा से जीवों को शुभाशुभ कर्मों का फल (सुख-दु:ख) प्राप्त होता है।

जीव द्वारा किए गए पुण्य अथवा पाप विपाक होने (फल प्रदान करने) पर ही समाप्त होते हैं-

**'क्लेशमूल: कर्माशयो दृष्टादृष्टजन्मवेदनीय:'**

यो. द. २.१२

अत: संक्षेप में कह सकते हैं कि जीव द्वारा किए जाने वाले अशुभ कर्म पाप हैं। वह फल प्रदान (भुगाने) करने पर ही समाप्त होते हैं। यथा ईश्वर फल प्रदान किए बिना उन्हें नष्ट नहीं करता। अत: उन पाप रूप कर्मों का फल दु:ख रूप में जीव प्राप्त करता है तथा फलभोग के समय प्रतिकूल वेदना के कारण दु:खी होता है।

# यज्ञ के आरम्भ में शुद्धिप्रकरण

**सञ्जय मोहन मित्तल**

ब्रह्मयज्ञ व देवयज्ञ का आरम्भ हम आचमन और अंगस्पर्श आदि शुद्धि प्रकरणों से करते हैं। इन विधियों से हमारी प्राचीनकाल से ही शुद्ध रहने की परम्पराओं की पुष्टि होती है। हमारे ऋषियों ने इन विधियों का उल्लेख कर जीवन में शुद्धि के महत्व को इंगित किया है। परन्तु क्या यह शुद्धि केवल भौतिक मात्र है या इसका कोई आत्मिक अर्थ भी है? जल शोधक है यह सर्वविदित है। जितना अधिक शुद्ध जल पियेंगे उतने ही हमारे शरीर के आन्तरिक अंग शुद्ध रहेंगे। वैसे ही नित्यप्रति शुद्ध शीतल जल से स्नान करने से शरीर मे स्वच्छता बनी रहेगी, परन्तु स्नान के उपरान्त यज्ञ वेदि पर बैठते ही पुनः शुद्धि करने का क्या प्रयोजन है?

यह शुद्धि मात्र सांकेतिक रूप में भौतिक है, क्योंकि इसका प्रयोजन तो कुछ और ही है और वह है विचारों और कर्मों की शुद्धि। आन्तरिक शुद्धि के लिए जल से आचमन करते हुए हम अपने ध्यान को परमपिता परमात्मा पर केन्द्रित करते हुए विचारों को शुद्ध करने का प्रयत्न कर रहे हैं। हम प्रार्थना कर रहे हैं कि हमारे मन में केवल धर्म के अनुकूल विचार ही जन्म लें और निवास करें, केवल ऐसे विचार जो सर्वहितकारी हों; बुरा या विनाशकारी विचार हमारे पास भी न फटकने पाए। ईश्वर से प्रार्थना कर रहे हैं कि हमें ऐसे गुण प्रदान करे जिनसे हमें न्यायोचित ज्ञान, धन और यश की प्राप्ति हो।

वैसे ही बाहरी शुद्धि के लिए अंगस्पर्श के दौरान, अपने अंगों में ओज बने रहने की प्रार्थना करते हुए हम अपने कर्मों को शुद्ध रखने का वचन भी दे रहे हैं। हम वचन दे रहे हैं कि अपनी वाणी का प्रयोग केवल सत्य और हितकारी वचनों को बोलने में करेंगे; कभी भूल से भी पर-निन्दा या स्वयं की निन्दा न करेंगे। किसी की आलोचना भी इसी नियम को ध्यान में रखकर करेंगे। किसी को नीचा दिखाने के प्रयोजन से की गई आलोचना से दूर रहेंगे। इसी इन्द्रिय से किए गए खान-पान को भी शुद्ध सात्त्विक रखेंगे।

''**तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा**'' यजुर्वेद ४०.१

वाक्य का पालन करेंगे। अपनी श्वास को शुद्ध रखेंगे; उसे किसी भी प्रकार से धूम्र आदि के प्रदूषण से मुक्त रखेंगे। अपने नेत्रों का प्रयोग अच्छाइयाँ देखने के लिए करेंगे न कि बुराइयों की खोज में। अपने कानों का प्रयोग अच्छा सुनने के लिए ही करेंगे; परनिन्दा रसास्वादन से दूर रहेंगे। अपने हाथों का प्रयोग केवल धर्मोचित कर्मों के लिए करेंगे। अपने पैरों का प्रयोग केवल उसी जगह जाने के लिए करेंगे जहाँ जाना उचित है; अनुचित जगहों से दूर रहेंगे। और जो भी कर्म हम अपने किसी भी अंग द्वारा करेंगे वह वैदिक धर्म के अनुकूल ही होगा।

यज्ञ के आरम्भ में ही इन शुद्धि-प्रकरणों में यज्ञ के प्रयोजन को रेखांकित कर दिया गया है। इसके बाद आने वाले सारे प्रकरण जैसे स्तुति-उपासना, स्वस्तिवाचन, शान्तिकरण, अग्निहोत्र आदि इसी भाव को और गहराई में लेकर जाते हैं। स्वार्थ से ऊपर उठ अपने सारे कार्य सर्वहित में करना ही गीता का भी मूल संदेश है। यज्ञ ईश्वर प्रप्ति की सीढ़ी का पहली पायदान है। यज्ञ का महत्त्व केवल इतना ही है कि यह हमें धर्म मार्ग से भटकने से बचाता है। परन्तु ईश्वर की सच्ची उपासना तो केवल अच्छे कर्म करने में ही है। यज्ञ के उपरान्त स्वार्थवश कार्य करने से यज्ञ का पुण्य नष्ट हो जाता है। सब कर्म अच्छे हों तो ''**व्यशेमहि देवहितं यदायुः**'' यजुर्वेद २५.२१ को चरितार्थ करते हुए पूरा जीवन ही भक्तिमय हो जायेगा।

**न्यूजर्सी ( अमेरिका )**

## उन्नति का कारण सत्योपदेश

जिससे मनुष्य जाति की उन्नति और उपकार हो, सत्यासत्य को मनुष्य लोग जानकर सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग करें क्योंकि सत्योपदेश के बिना अन्य कोई भी मनुष्य जाति की उन्नति का कारण नहीं है। **( स. प्र. ३ )**

# महर्षि दयानन्द का वास्तविक जन्म दिवस

**शिवनारायण उपाध्याय**

इन्दौर से प्रकाशित होने वाले सांस्कृतिक पत्र 'वैदिक संसार' के फरवरी २०१९ के अंक में आदित्यमुनि वानप्रस्थ का एक लेख 'महर्षि दयानन्द का वास्तविक जन्मदिवस' नाम से प्रकाशित हुआ है जो एक कल्पित जन्मकुण्डली के आधार पर स्वामी दयानन्द सरस्वती का जन्म दिनांक १९.०९.१८२५ की मध्य रात्रि को प्रातःकाल ३:३० बजे बताया गया है। पण्डित श्रीकृष्ण शर्मा ने दावा किया था कि स्वामी जी की उक्त जन्मकुण्डली उन्हें स्वामीजी के पारिवारिक जनों से मिली है। यह एक गप्प है। यदि स्वामीजी के पारिवारिक जनों के पास यह जन्मकुण्डली होती तो वह पण्डित देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय, पण्डित विजय शंकर जी आदि विद्वानों को अवश्य प्राप्त होती। प्रारम्भ में डॉ. भवानीलाल भारतीय ने भी इसे स्वीकार कर लिया। उनका ध्यान इस तथ्य की ओर न गया कि पण्डित श्रीकृष्ण शर्मा ने अपने लेख में कार्तिकी संवत् १८८१ लिखा है। इसका तात्पर्य यह है कि स्वामी जी की छठी उत्तर भारतीय विक्रम संवत् की दृष्टि से संवत् १८८२ वि. में भाद्रपद शुक्ला चतुर्दशी संवत् २४ सितम्बर १९२५ को मनाई गई जबकि स्वामीजी की जन्मतिथि २ सितम्बर १८२४ ई. अर्थात् १८८१ वि. की भाद्रपद शुक्ला नवमी को वे मानते हैं। वास्तव में ऋषि दयानन्द के निन्दक और प्रबल विरोधी जियालाल जैन ने यह तिथि चलाई है। पण्डित अखिलानन्द ने 'दयानन्द दिग्विजय' में इसका प्रचार किया है।

**मासि भाद्रपदे पक्षे सिते वारे बृहस्पतेः।**
**नवम्यां मध्यमायाते भास्करेऽपि विहाय सः।।**
**नक्षत्रेति शुभे योगेऽति प्रीतिवर्धने।**
**चन्दाष्टवसुराकेशयोजनाल्लब्धभावने।।**
**विक्रमादित्यनृपतेर्वत्सरे जगतां गुरुः।**
**निर्गत्य जननी कुक्षेरागतो जगतीतले।।**

परन्तु इसमें जन्म समय मध्याह्नकाल दिया गया है। मामराज सिंह ने भी स्वामी जी की जन्मतिथि यही स्वीकार कर ली थी। टहलराम गिरधारी दास ने भी यही तिथि लिखी थी, परन्तु इनमें किसी ने भी इसके प्रामाणिक होने का आधार नहीं बताया। महर्षि की प्रामाणिक जन्मतिथि को सर्वप्रथम आर्य जनता के समक्ष गम्भीर अनुसन्धान के साथ प्रस्तुत करने का श्रेय प्रो. भीमसेन शास्त्री कोटा को है। सार्वदेशिक धर्मार्य सभा ने पण्डित श्रीकृष्ण शर्मा से मिलकर उनकी काल्पनिक बातों को अस्वीकार किया। सार्वदेशिक धर्मार्य सभा में यह विषय विचारार्थ प्रस्तुत हुआ। सार्वदेशिक धर्मार्य सभा के भूतपूर्व मन्त्री आचार्य विश्वश्रवा व्यास ने पण्डित श्रीकृष्ण शर्मा के विषय में लिखा है। 'महर्षि की जन्मतिथि के सम्बन्ध में सार्वदेशिक धर्मार्य सभा दिनांक २५.०५.१९५६ तारीख २७.०१.१९५७ तारीख ०८.०६.१९५८ तारीख २३.०७.१९६० इतने काल तक गम्भीरतापूर्वक विचार हुआ। उन दिनों स्वामी आत्मानन्द जी सरस्वती सार्वदेशिक धर्मार्य सभा के प्रधान थे और मैं स्वयं धर्मार्य सभा का प्रधानमन्त्री था। हमने धर्मार्य सभा के समक्ष आर्यजगत् के आर्य विद्वानों के अतिरिक्त पण्डित विजयशंकर जी बम्बई आदि उनके विशिष्ट व्यक्तियों को भी विचारार्थ बुलाया। पण्डित श्रीकृष्ण शर्मा से मैं स्वयं मिला। उनका ज्ञान इस विषय में विशेष न था और न वे शिक्षित व्यक्ति ही थे। हर विषय में उनकी अलग कल्पनाएँ थी। हमारे सामने विभिन्न स्रोतों से प्राप्त पाँच जन्मतिथियाँ थीं।'

महर्षि की आत्मकथा में वर्णित महर्षि की स्वलिखित जीवन घटनाओं को ज्योतिष के आधार पर विचार करने पर जो तिथि निश्चित हुई वह पर्याप्त प्रतीक्षा के पश्चात् सार्वदेशिक सभा की अन्तरंग बैठक तारीख ०२.०४.१९६७ को घोषित की गई, वह इस प्रकार है–

ऋषि की जन्मतिथि संवत् १९८१ फाल्गुन बदी दशमी १२ फरवरी १८२५ शनिवार। अतः हम श्रीकृष्ण

शर्मा द्वारा ऋषि की काल्पनिक जन्मकुण्डली को प्रस्तुत करने की भर्त्सना करते हैं, फिर उन्होंने पण्डित श्रीकृष्ण शर्मा द्वारा प्रस्तुत जन्मकुण्डली को अप्रामाणिक मानने का प्रबल प्रमाण भी दिया है।

अधिक पढ़ना चाहें डॉ. ज्वलन्त कुमार द्वारा रचित महर्षि दयानन्द सरस्वती की प्रमाणिक जन्मतिथि पुस्तक परिशिष्ट तीन में पण्डित भीमसेन शास्त्री द्वारा दिया गया वर्णन पढ़ें, फिर इसी पुस्तक का परिशिष्ट भी ध्यान से पढ़ें जिसमें इस विषय में सार्वदेशिक सभा का निर्णय भी दिया गया है।

सार्वदेशिक धर्मार्य सभा ने २३ जुलाई १९६० को यमुनानगर में अधिवेशन किया और वहीं निश्चय किया जो इस प्रकार है।

गत दो वर्षों से ऋषि जन्मतिथि तथा आर्यसमाज स्थापना दिवस के विषय में विचार चल रहा है। श्री पण्डित विजयशंकर जी बम्बई और श्री इन्द्रदेव पीलीभीत आदि के साथ भी इस सम्बन्ध में विचार हुआ। इन दोनों विषयों पर समस्त ऐतिहासिक दृष्टिकोण से विचार किया गया और पण्डित श्री इन्द्रजी द्वारा लिखित 'आर्यसमाज का इतिहास' ग्रन्थ से प्रकरण भी विचार किये गये। इस सबके उपरान्त धर्मार्थ सभा इस परिणाम पर पहुँची है- ऋषि की जन्मतिथि संवत् १८८१ फाल्गुन बदी दशमी (१२ फरवरी १८२५) शनिवार है। इसकी पुष्टि सार्वदशिक सभा ने सर्वसम्मति से २ अप्रैल १९६७ को की। (आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री, धर्माधिकारी सार्वदेशिक धर्मार्य सभा) इस निर्णय के बाद किसी को भी इस विषय में सन्देह उत्पन्न कर विवाद को बढ़ाना उचित नहीं है। श्रीमान् आदित्यमुनि यदि इन सभी विद्वानों को अज्ञ मानते हैं, तो मैं केवल यही कह सकता हूँ यह उनकी हठधर्मिता है। धर्मार्य सभा के विद्वानों एवं पण्डित भीमसेन शास्त्री से मैं व्यक्तिगत रूप से परिचित रहा हूँ और सभी को प्रतिष्ठित विद्वान् मानता हूँ। इतिशम्

**दादाबाड़ी, कोटा (राज.)**

## ईश्वर जग का निर्माता है

**पं. नन्दलाल निर्भय**

तू ओ३म् जप कर बंदे, ईश्वर जग का निर्माता है।
तू काम छोड़ दे गंदे, ईश्वर जग का निर्माता है।।

निराकार, निर्लेप, निरंजन, सर्व विश्व का स्वामी है।
पालक, संहारक है जग का, प्रभु सर्वान्तर्यामी है।।

लेता न किसी से चंदे, ईश्वर जग का निर्माता है।
तू काम छोड़ दे गंदे, ईश्वर जग का निर्माता है।।

मानव चोला, रत्न अमोला, शुभ कर्मों से पाया है।
विषयों की कीचड़ में फँसकर तूने इसे गँवाया है।।

मत कर तू गंदे धंधे, ईश्वर जग का निर्माता है।
तू काम छोड़ दे गंदे, ईश्वर जग का निर्माता है।।

वैदिक पथ को भूल गया तू, करता है हेराफेरी।
दया-धर्म को तजकर पगले, करता है मेरी-मेरी।।

यह महानाश के फंदे, ईश्वर जग का निर्माता है।
तू काम छोड़ दे गंदे, ईश्वर जग का निर्माता है।।

भूखों-प्यासों, नंगों को अब, अपने गले लगा ले तू।
धन-दौलत या दानी बनकर, जग में नाम कमा ले तू।।

मत भूखा उन्हें मरने दे, ईश्वर जग का निर्माता है।
तू काम छोड़ दे गंदे, ईश्वर जग का निर्माता है।।

वेद-विरोधी काम करेगा, भारी कष्ट उठाएगा।
जग के मालिक, जगदीश्वर से, कभी नहीं बच पाएगा।।

तू कभी न मार परिन्दे, ईश्वर जग का निर्माता है।
तू काम छोड़ दे गंदे, ईश्वर जग का निर्माता है।।

खाना-पीना, मैथुन करना, पशुओं का यह लक्षण है।
परोपकार करे जो जग में, उसका सच्चा जीवन है।।

तू चेत, अक्ल के अंधे, ईश्वर जग का निर्माता है।
तू काम छोड़ दे गंदे, ईश्वर जग का निर्माता है।।

सब धन-दौलत कोठी बंगले, यहीं पड़े रह जाएंगे।
'नन्दलाल' शुभ कर्म किया कर, काम अंत में आएंगे।।

दे काट मौत के फंदे, ईश्वर जग का निर्माता है।
तू काम छोड़ दे गंदे, ईश्वर जग का निर्माता है।।

**आर्यसदन, बहीन, जनपद पलवल, हरि.**

# संस्था की ओर से....

## क्या आप प्रतिदिन अतिथि यज्ञ नहीं कर पाते?
## तो आइये, अतिथि यज्ञ के होता बनिये

वैदिक नित्यकर्मों में अतिथि यज्ञ प्रतिदिन करना अनिवार्य है, किन्तु आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं, फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय? इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाखे जलाकर व्यय करते हैं, असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी-छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युक्त पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें, इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन प्रतिवर्ष ५ हजार एक सौ रु. की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशित भी किये जाते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थित होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

***अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्षगांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि लगभग पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उन्हें उनके जन्मदिवस आदि पर परोपकारिणी सभा की ओर से दूरभाष द्वारा आशीर्वाद प्रदान किया जायेगा। यदि उस शुभ अवसर पर वे स्वयं उपस्थित होकर यजमान बनें तो यह सर्वोत्तम होगा।***

## अतिथि-यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि-यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगाँठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय **जन्मतिथि/वैवाहिक वर्षगाँठ आदि व दूरभाष संख्या** सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नकद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

## परोपकारिणी सभा की गतिविधियाँ

परोपकारिणी सभा महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित उनकी उत्तराधिकारिणी सभा है और केवल नाम से ही नहीं, बल्कि अपने कार्यों से भी वह ऋषि के उत्तराधिकार के दायित्व को पूर्णतया निभा रही है। महर्षि दयानन्द सरस्वती

ने इस सभा की स्थापना के समय तीन उद्देश्य रखे थे।

१. वेदादि सत्यशास्त्रों का प्रकाशन २. विद्वान् उपदेशक तैयार करके देश-विदेश में वैदिक धर्म का प्रचार एवं ३. आर्यावर्त्तीय दीन-दरिद्रों की सेवा।

इन सभी कार्यों को सभा अपने विभिन्न प्रकल्पों के माध्यम से पूरा करने में सर्वसामर्थ्य से लगी हुई है। यद्यपि सभा के पास आर्थिक आय का कोई स्थाई माध्यम नहीं है, पुनरपि ऋषिभक्तों एवं आर्यजनों के सहयोग और विश्वास पर ही सभा ने बड़े-बड़े कार्यों को प्रारम्भ किया और निरन्तर कर भी रही है। आचार्य डॉ. धर्मवीर जी, जो कि वर्तमान में परोपकारिणी सभा के प्रधान एवं मूल स्तम्भ थे, उनका कहना था कि **''कार्य यदि अच्छा है तो उसे प्रारम्भ कर देना चाहिये, सहयोग तो स्वयं ही मिल जाता है।''** यही शैली अपनाकर आज भी वैदिक विचार के प्रचार का कार्य निरन्तर जारी है। डॉ. धर्मवीर जी के जाने से सभा को बड़ा आघात अवश्य लगा है, परन्तु आर्यों का स्नेह, भरोसा उनके द्वारा प्रारम्भ किये गये कार्यों को रुकने नहीं देगा-ऐसा सभा को पूर्ण विश्वास है।

परोपकारिणी सभा आज अनेक कार्यों, माध्यमों से इस वेद प्रचार यज्ञ में लगी है, जिसकी सूची यहाँ दी जा रही है-

**भव्य ऋषि उद्यान आश्रम, अतिथि यज्ञ, भोजनशाला, गौशाला, वानप्रस्थ एवं संन्यासाश्रम, गुरुकुल, परोपकारी पत्रिका, प्रकाशन, योग साधना एवं चरित्र निर्माण शिविर, सत्यार्थ प्रकाश व ऋषि जीवन चरित्र का नि:शुल्क वितरण, पाण्डुलिपियों का डिजिटलाइजेशन, पुस्तकालय, औषधालय, देश-देशान्तरों में वेद-प्रचार, आयुर्वेदिक औषधालय।**

## दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में वर्ष २०१२ से आयुर्वेदिक चिकित्सालय चल रहा है। चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ नि:शुल्क दी जाती हैं।

दानी महानुभावों से सहयोग की भी अपेक्षा है।

## परोपकारिणी सभा में आयुर्वेदिक चिकित्सक की आवश्यकता

सभा द्वारा संचालित आयुर्वेदिक चिकित्सालय के लिये योग्य आयुर्वेदिक चिकित्सक की आवश्यकता है। चिकित्सालय में सेवा देने का समय प्रतिदिन २ घण्टे है। आवास, भोजन आदि की व्यवस्था सभी की ओर से ही होगी।

**सम्पर्क- ०१४५-२६२१२७०, ९४६०४२११८३**

## परोपकारिणी सभा के प्रकल्पों में सहयोग करने हेतु

**खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)**

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715**

**IFSC-SBIN0007959**

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**091104000057530**

**IFSC-IBKL0000091** email : psabhaa@gmail.com

## दानदाताओं की सूची

### अतिथि यज्ञ के होता

### ( ०१ से ३० अप्रैल २०१९ तक )

१. सुश्री श्रुति चौधरी, इन्दौर २. श्री श्रेयस्कर चौधरी, इन्दौर ३. मास्टर अर्णव अग्रवाल, इन्दौर ४. श्री रवि अग्रवाल, इन्दौर ५. श्री शिव कुमार चौधरी, इन्दौर ६. सुश्री श्रेयसी चौधरी, इन्दौर ७. श्रीमती सुषमा चौधरी, इन्दौर ८. श्रीमती ऋचा अग्रवाल, इन्दौर ९. श्री सुविज्ञ चौधरी, इन्दौर १०. सुश्री अनन्या अग्रवाल, इन्दौर ११. श्रीमती प्रेरणा चौधरी, इन्दौर १२. मै. स्वस्तिकॉम चेरिटेबिल ट्रस्ट, अमरावती १३. मेजर रतन सिंह यादव, रेवाड़ी १४. श्री सूर्यप्रकाश आर्य, विदिशा १५. श्री राजेन्द्र कुमार गुप्ता, कोटा १६. श्रीमती सुवर्चा व श्री अंकुर भार्गव, बैंगलोर।

## गोभक्तों से निवेदन

ऋषि-उद्यान में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गोशाला की गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तुक अतिथियों में नि:शुल्क किया जाता है। आप सभी गौ-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चैक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएँगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

### ऋषि-उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता

### ( ०१ से ३० अप्रैल २०१९ तक )

१. श्रीमती भँवरी देवी सोमानी, राजगढ, अजमेर २. श्री बृजभूषण गुप्ता, पंचकुला ३. श्री विद्याधर जी. चन्दानानी, कच्छ ४. श्री कश्मीरीलाल सिंघल, गिदड़बाहा ५. श्री पूर्णाराम, बीकानेर ६. श्री प्रकाश चतुर्वेदी, मुंबई ७. श्री ऋषभ गुप्ता, अम्बालाकैन्ट।

## परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित आगामी कार्यक्रम

**१.** २२ से २९ मई, २०१९ - **आर्य वीराङ्गना शिविर**

**२.** १६ से २३ जून, २०१९- **योग-साधना शिविर**

**३.** १३ से २० अक्टूबर, २०१९- **योग-साधना शिविर**

**४.** ०१, ०२, ०३ नवम्बर २०१९- **ऋषि मेला**

**ऋषि उद्यान में होने वाले कार्यक्रमों के लिए**

**सम्पर्क सूत्र- ०९४६०४२११८३, ०१४५-२४६०१६४, ०१४५-२६२१२७०**

मनुष्यों को चाहिये कि अपने पुरुषार्थ से सुवर्ण आदि धन को इकट्ठा कर घोड़े आदि उत्तम पशुओं को रक्खें क्योंकि जब तक इस सामग्री को नहीं रखते तब तक गृहाश्रमरूपी यज्ञ परिपूर्ण नहीं कर सकते इसलिये सदा पुरुषार्थ से गृहाश्रम की उन्नति करते रहें। **- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.६३**

## (परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित)

# योग–साधना शिविर

## दिनांक : १६ से २३ जून २०१९

आर्यसमाज के उच्चकोटि के विद्वान् व साधकों के निर्देशन में परोपकारिणी सभा योग साधना शिविर का आयोजन कर रही है। अपने आध्यात्मिक जीवन को गति प्रदान करने में ये शिविर सहयोगी होगा।

### इच्छुक प्रार्थियों हेतु नियम व अनुशासन

१. प्रत्येक प्रार्थी के लिए पूर्ण मौन अनिवार्य होगा।

२. शिविर के काल में किसी साधक के द्वारा नियम व अनुशासन भंग करने पर उसे शिविर के मध्य में ही शिविर छोड़ने के लिए बाध्य किया जा सकता है।

३. पूरे शिविर में साधक के द्वारा किसी भी माध्यम से बाह्य–सम्पर्क करना निषिद्ध रहेगा।

४. शिविर काल में किसी भी साधक को ऋषि उद्यान परिसर से बाहर जाने की अनुमति नहीं होगी।

५. साधकों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति ऋषि–उद्यान परिसर में ही की जायेगी।

६. बाह्य–वृत्ति उत्पादक साधनों जैसे– समाचार–पत्र पढ़ना, आकाशवाणी श्रवण व दूरदर्शन देखने आदि पर पूर्ण प्रतिबन्ध रहेगा।

७. किसी प्रकार का शारीरिक रोग यथा– खाँसी, जुकाम अथवा अन्य कोई ध्वनि उत्पादक रोग वाले को प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

८. बच्चों को साथ लाये जाने पर प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जाएगा।

९. शिविर के प्रारम्भ दिन से लेकर समापन–सत्र पर्यन्त पूर्ण रूप से शिविर में भाग लेना अनिवार्य होगा।

१०. नियम व अनुशासन के पालन को आवेदन में ही लिखित स्वीकार करना होगा।

उपरिलिखित किसी भी नियम व अनुशासन का पालन करने में असमर्थ व अयोग्य प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

**प्रार्थियों के लिए सूचनाएँ**– परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर (राज.) कार्यालय से (०१४५–२४६०१६४) से संपर्क कर शिविर से पूर्व शुल्क जमा करवा कर अपने नाम का पंजीयन करा लें। शिविर में माता–बहिनें भी भाग ले सकती हैं। पुरुषों एवं महिलाओं के आवास की सामूहिक व्यवस्था पृथक्–पृथक् की जाती है। पृथक् कक्ष चाहने वालों को अतिरिक्त शुल्क १००० से २००० रु. देय होता है। पृथक् कक्ष की व्यवस्था पूर्व सूचना व उपलब्धता के अनुसार की जाती है। ऋषि उद्यान में दरी, गद्दे, तकिए एवं बर्तन उपलब्ध हैं, शेष दैनिक उपयोग की वस्तुएँ यथा मंजन, ब्रश, साबुन, तेल, दवाएँ, बिछाने–ओढ़ने की चादरें, लिखने के लिए संचिका (नोटबुक), लेखनी, करदीप (टार्च) आदि को साधक अपने साथ लाएँ। वस्त्र सादगी एवं शिष्टाचार के अनुकूल हों, आभूषणों एवं सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग न हो। आपके पास योगदर्शन हो तो साथ लाएँ। सतर्कता की दृष्टि से कीमती वस्तुएँ साथ न लायें। यदि आपको कोई संक्रामक रोग, तेज खांसी, दमा, मिर्गी आदि मानसिक रोग, वायु विकार या अन्य गंभीर रोग हो, तो कृपया शिविर में आना स्थगित रखें। लौटने का रेल–आरक्षण शिविर में आने से पूर्व करवा लें। अजमेर पहुँचने की सूचना घर पर देनी हो तो शिविर स्थल में प्रवेश से पहले दे देवें। खाने–पीने की वस्तुएँ साथ न

लावें।

यह शिविर परोपकारिणी सभा, अजमेर के सौजन्य से आयोजित किया जा रहा है। शिविर शुल्क १००० रु. मात्र जमा करना होगा। शिविर में भाग लेने वालों को शिविर के प्रारंभ दिनांक को सायं चार बजे तक शिविर स्थल ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर (०१४५-२६२१२७०) में पहुँच जाना आवश्यक है क्योंकि इसी दिन शाम को शिविर के अनुशासन एवं विभिन्न व्यवस्थाओं संबन्धी महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ दी जाएँगी। शिविर का समापन अन्तिम दिन दोपहर एक बजे तक होगा। शिविर समाप्ति से पूर्व जाने की अनुमति नहीं दी जायेगी।

शिविर से आपका जीवन श्रेष्ठतर व पवित्रतर बने, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर दूरभाष : ०१४५-२४६०१६४

: मार्ग :

**ऋषि उद्यान शिविर स्थल पर पहुंचने के लिए फॉयसागर की ओर जाने वाली सिटी बस या ऑटो-रिक्शा, रेलवे स्टेशन व बस स्टेण्ड से ( वाया-आगरा गेट/फव्वारा चौराहा ) सर्वदा सुलभ रहते हैं।**

email:psabhaa@gmail.com

**संयोजक**

---

# वैदिक पुस्तकालय अजमेर द्वारा प्रकाशित पुस्तकों पर विशेष छूट

**१. कुल्लियाते आर्य मुसाफिर ( पं. लेखराम ग्रन्थ संग्रह )- दो भाग**
**लेखक**- पण्डित लेखराम
**सम्पादक**- प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु, अबोहर, पंजाब
**मूल्य**- रुपये ~~९००~~/- **छूट पर**- ६००/-

**२. महर्षि दयानन्द का पत्र-व्यवहार ( दो भाग में )**
**मूल्य** - रुपये ~~८००~~/- **छूट पर - ५००/-**

**३. अष्टाध्यायी भाष्य- ३ भाग ( १ सैट )**
**भाष्यकार**- महर्षि दयानन्द सरस्वती
**मूल्य**- रुपये ~~५००~~/- **छूट पर**- ३५०

**पुस्तकें हेतु सम्पर्क करें:-**

**वैदिक पुस्तकालय, अजमेर से क्रय की जाने वाली पुस्तकों की राशि ऑनलाइन जमा कराने हेतु**
खाता धारक का नाम - **वैदिक पुस्तकालय, अजमेर। दूरभाष - 0145-2460120**
बैंक का नाम - **पंजाब नेशनल बैंक, कचहरी रोड, अजमेर।**
बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या - **0008000100067176**
**IFSC - PUNB0000800**